

प्राथमिक शिक्षक

शैक्षिक संवाद की पत्रिका

वर्ष 42

अंक 3

जुलाई 2018



पत्रिका के बारे में

प्राथमिक शिक्षक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है, शिक्षकों और संबद्ध प्रशासकों तक केंद्रीय सरकार की शिक्षा नीतियों से संबंधित जानकारीयों पहुँचाना, उन्हें कक्षा में प्रयोग में लाई जा सकने वाली सार्थक और संबद्ध सामग्री प्रदान करना और देश भर के विभिन्न केंद्रों में चल रहे पाठ्यक्रमों और कार्यक्रमों आदि के बारे में समय पर अवगत कराते रहना। शिक्षा जगत में होने वाली गतिविधियों पर विचारों के आदान-प्रदान के लिए भी यह पत्रिका एक मंच प्रदान करती है।

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने होते हैं। अतः यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक चिंतन में परिषद् की नीतियों को ही प्रस्तुत किया गया हो। इसलिए परिषद् का कोई उत्तरदायित्व नहीं है।

© 2018. पत्रिका में प्रकाशित लेखों का रा.शै.अ.प्र.प. द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित है। परिषद् की पूर्व अनुमति के बिना, लेखों का पुनर्मुद्रण किसी भी रूप में मान्य नहीं होगा।

सलाहकार समिति		रा.शै.अ.प्र.प. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय	
निदेशक, एन.सी.ई.आर.टी.	: हषिकेश सेनापति	एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस	
अध्यक्ष, प्रारंभिक शिक्षा विभाग	: अनूप कुमार राजपूत	श्री अरविंद मार्ग	
अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	: एम. सिराज अनवर	नयी दिल्ली 110 016	फ़ोन : 011-26562708
संपादकीय समिति		108, 100 फीट रोड	
अकादमिक संपादक	: पद्मा यादव एवं उषा शर्मा	होस्केरे हल्ली एक्सटेंशन	
मुख्य संपादक	: श्वेता उप्पल	बनाशंकरी III स्टेज	
		बेंगलुरु 560 085	फ़ोन : 080-26725740
प्रकाशन मंडल		नवजीवन ट्रस्ट भवन	
मुख्य व्यापार प्रबंधक	: गौतम गांगुली	डाकघर नवजीवन	
मुख्य उत्पादन अधिकारी	: अरुण चितकारा	अहमदाबाद 380 014	फ़ोन : 079-27541446
संपादन सहायक	: ऋषिपाल सिंह	सी. डब्ल्यू. सी. कैंपस	
उत्पादन सहायक	: प्रकाश वीर सिंह	धनकल बस स्टॉप के सामने	
आवरण		पनिहटी	
अमित श्रीवास्तव		कोलकाता 700 114	फ़ोन : 033-25530454
मुख पृष्ठ		सी. डब्ल्यू. सी. कॉम्प्लैक्स	
स्नेहा शर्मा, कक्षा V, केंद्रीय विद्यालय, आई.आई.टी., दिल्ली		मालीगाँव	
		गुवाहाटी 781 021	फ़ोन : 0361-2674869

मूल्य एक प्रति ₹ 65.00

वार्षिक ₹ 260.00

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग द्वारा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 के लिए प्रकाशित तथा चन्द्रप्रभु ऑफ़सेट प्रिंटिंग वर्क्स प्रा. लि., सी-40, सैक्टर-8, नोएडा 201 301 द्वारा मुद्रित।

प्राथमिक शिक्षक

वर्ष 42

अंक 3

जुलाई 2018

इस अंक में

संवाद		3
लेख		
1. हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण हेतु उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव का प्रयोगात्मक अध्ययन	अंदलीब	5
2. हिंदी बाल काव्य का बदलता स्वरूप और बच्चे	टीना कुमारी	12
3. समावेशी शिक्षा में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया	अखिलेश यादव	17
4. विद्यालय प्रबंधन समिति की भूमिका एवं कार्य	विक्रम कुमार	24
5. विज्ञान-गीत संगीत की शक्ति द्वारा विज्ञान का प्रभावी शिक्षण	रुचि वर्मा	30
6. भावात्मक विकास	पूनम	35
7. बाल केंद्रित शिक्षा तथा प्रगतिशील शिक्षा	सुनैना मित्तल	42
8. प्राथमिक बाल शिक्षा के लक्ष्य तथा क्रियाकलाप	पद्मा यादव	48
9. शिक्षक की जवाबदेही से शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता में सुधार	एम. एम. रॉय	55
10. सोशल मीडिया शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति का नवीन उपकरण	चित्रा सिंह	60

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



विद्यया से अमरत्व
प्राप्त होता है।

परस्पर आवेष्टित हंस राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) के कार्य के तीनों पक्षों के एकीकरण के प्रतीक हैं—

- (i) अनुसंधान और विकास,
(ii) प्रशिक्षण, तथा (iii) विस्तार।

यह डिजाइन कर्नाटक राज्य के रायचूर ज़िले में मस्के के निकट हुई खुदाइयों से प्राप्त ईसा पूर्व

तीसरी शताब्दी के अशोकयुगीन भग्नावशेष के आधार पर बनाया गया है।

उपर्युक्त आदर्श वाक्य ईशावास्य उपनिषद् से लिया गया है जिसका अर्थ है—
विद्यया से अमरत्व प्राप्त होता है।

विशेष

11. उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान सीखने के प्रतिफल (कक्षा 6 से 8) 66

बालमन कुछ कहता है

12. मेरी मम्मी मदिहा खान 77

कविता

13. विज्ञान की शिक्षा सुनील कुमार गौड़ 78



संवाद

बच्चे अपने परिवेश में अनेक प्रकार के अनुभवों को ग्रहण करते हुए पलते और बढ़ते हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ने का समर्थन करती है, बाल-केंद्रित शिक्षण अधिगम प्रक्रियाएँ अपनाने पर बल देती है तथा विभिन्न कौशलों का विकास करते हुए ज्ञान सृजन करने की बात कहती है। शिक्षा के इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शिक्षकों की भूमिका अहम हो जाती है।

शिक्षा के क्षेत्र में आज अनेकों नवाचार हो रहे हैं। शिक्षक, सेमिनार, कॉन्फ्रेंस, प्रशिक्षण कार्यक्रमों आदि में भाग लेकर स्वयं को सामयिक बनाए रखने का प्रयत्न कर रहे हैं। उनके यह प्रयत्न सराहनीय हैं। अपने द्वारा किए गए प्रयासों को, वे दूसरों के साथ विभिन्न माध्यमों द्वारा, जैसे — सोशल मीडिया, पत्रिकाओं इत्यादि के द्वारा साझा भी कर रहे हैं।

हमारे इस अंक में भी शिक्षकों द्वारा किए गए कुछ ऐसे ही प्रयास, विचार, लेख, जैसे — समावेशी शिक्षा, विद्यालय प्रबंधन समिति, संगीत की शक्ति, भावात्मक विकास, बाल-केंद्रित शिक्षा, सोशल मीडिया का प्रयोग, शिक्षकों की जवाबदेही, आदि शामिल हैं।

आशा है यह अंक आपको पसंद आएगा। आप भी पत्रिका के लिए लेख भेज सकते हैं। लेखकों के लिए दिशा-निर्देश पत्रिका के अंत में दिए गए हैं। पत्रिका में सुधार हेतु आप हमें अपने सुझाव भेज सकते हैं।

अकादमिक संपादक



मिल-जुल कर स्कूल में जाएँ, साथ पढ़ें और
साथ में खाएँ। रंग-बिरंगी प्यारी दुनिया,
साथ मिलकर इसे सजाएँ।

हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण हेतु उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव का प्रयोगात्मक अध्ययन

अंदलीब*

जिस प्रकार मौखिक भाषा में शब्दों के शुद्ध उच्चारण में अशुद्धियाँ हो सकती हैं, उसी प्रकार लिखित भाषा में छात्र प्रायः शब्दों के शुद्ध रूप-लेखन अथवा वर्तनी में भी अशुद्धियाँ करते हैं। शुद्ध वर्तनी शिक्षण में प्राथमिक स्तर पर अध्यापक की भूमिका के महत्त्व को समझते हुए इस शोध-पत्र में भावी अध्यापकों अर्थात् (डी.एल.एड. हिंदी माध्यम) के प्रथम वर्ष में अध्ययनरत 50 महिला तथा पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों का अध्ययन किया गया। उनकी वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के निराकरण के लिए इस प्रयोगात्मक शोध में पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण के मध्य में उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम भी दिया गया। शोध के परिणामों में यह कार्यक्रम शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण में प्रभावी पाया गया।

भाषा विचाराभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। हिंदी भाषा, संसार की सुव्यवस्थित भाषाओं में से एक है। भाषा के दो मुख्य रूप हैं — मौखिक तथा लिखित। जिस प्रकार मौखिक भाषा में शब्दों के शुद्ध उच्चारण में अशुद्धियाँ हो सकती हैं, उसी प्रकार लिखित भाषा में छात्र प्रायः शब्दों के शुद्ध रूप-लेखन अथवा वर्तनी में भी अशुद्धियाँ करते हैं। वर्तनी का शाब्दिक अर्थ है — वर्तन या अनुवर्तन अर्थात् पीछे-पीछे चलना। अशुद्ध वर्तनी के तीन मुख्य कारण हैं —

हिंदी वर्णमाला के वर्णों का सही ज्ञान न होना
हिंदी वर्णमाला के कुछ वर्णों के दो रूप प्रचलित होने के कारण, संयुक्ताक्षरों के आकार तथा मात्राओं के प्रयोग का सही ज्ञान न होने के कारण, व्यंजनों के संयोग के नियम, विभक्ति-चिह्न तथा पंचम वर्ण के उचित प्रयोग का ज्ञान न होना आदि कारणों से भी छात्र लेखन में अशुद्धियाँ करते हैं।

अशुद्ध उच्चारण

हिंदी ध्वनियों के उच्चारण तथा ध्वनि चिह्नों की समरूपता के कारण अशुद्ध उच्चारण होने से वर्तनी के भी अशुद्ध होने की आशंका बनी रहती है।

* सहायक प्रोफेसर, आई.ए.एस.ई., जामिया मिल्लिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली

व्याकरण के नियमों का ज्ञान न होना

संधि के नियम, उपसर्ग और प्रत्यय के योग से शब्द बनाने के नियम, लिंग, वचन तथा विकार संबंधी नियम आदि का उचित ज्ञान न होने के कारण वर्तनी संबंधी अशुद्धियाँ होती हैं।

हिंदी भाषा के शुद्ध उच्चारण तथा वर्तनी शिक्षण में अध्यापक की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। विशेषकर प्राथमिक स्तर पर क्योंकि प्राथमिक स्तर पर सीखी गयी भाषा भविष्य में सीखे जाने वाले ज्ञान की आधारशिला है। इसी विषय को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक स्तर पर हिंदी-शिक्षण के लिए प्रशिक्षण ले रहे शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों का अध्ययन किया गया।

समस्या कथन

समस्या कथन इस प्रकार है — हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण हेतु उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव का प्रयोगात्मक अध्ययन।

चरों की परिचालन परिभाषा

वर्तनीगत अशुद्धियाँ — एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा निर्मित दसवीं कक्षा की हिंदी की पाठ्यपुस्तक में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा विरचित ‘स्त्री शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खंडन’ नामक निबंध का श्रुतलेख शिक्षक-प्रशिक्षुओं को दिया गया। वर्तनीगत अशुद्धियों का तात्पर्य इस लेख में शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा की जाने वाली वर्तनी संबंधी अशुद्धियाँ हैं।

उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम — उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण के लिए पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण के मध्य में संचालित, गद्य-शिक्षण की ‘स्पष्टीकरण विधि’ पर आधारित तथा शोधार्थी द्वारा निर्मित त्रिदिवसीय कार्यक्रम है।

हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षु — हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं से अभिप्राय जामिया मिल्लिया इस्लामिया विश्वविद्यालय के डी.एल.एड. कार्यक्रम प्रथम वर्ष (हिंदी माध्यम) में अध्ययनरत स्त्री एवं पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षकों से हैं।

अनुसंधानात्मक प्रश्न

1. हिंदी माध्यम के पुरुष एवं महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा की गई हिंदी की वर्तनीगत अशुद्धियों का वर्तमान स्तर क्या है?
2. क्या उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा की गई वर्तनीगत गलतियों का निराकरण करने में प्रभावकारी है?

शोध के उद्देश्य

1. हिंदी माध्यम के पुरुष एवं महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा की गयी हिंदी की वर्तनीगत अशुद्धियों की तुलना करना।
2. हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. हिंदी माध्यम के पुरुष एवं महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव की तुलना करना।

शोध की शून्य परिकल्पनाएँ

1. हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा की गयी हिंदी की वर्तनीगत अशुद्धियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
3. हिंदी माध्यम के पुरुष एवं महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध का सीमांकन

1. इस शोध का सीमांकन केवल राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली तक किया गया है।
2. यह शोध केवल जामिया मिल्लिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में डी.एल.एड. कार्यक्रम में अध्ययनरत शिक्षक-प्रशिक्षुओं तक सीमित है।
3. यह शोध केवल हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं तक सीमित है।

शोध विधि तथा अनुसंधानात्मक अभिकल्प

प्रस्तुत शोध में प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। इस शोध में प्रयोगात्मक विधि के 'एकल समूह पूर्व परीक्षण-पश्च परीक्षण अभिकल्प' का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श

प्रस्तुत शोध की लक्ष्य जनसंख्या (target population) दिल्ली में डी.एल.एड. पाठ्यक्रम, हिंदी माध्यम में अध्ययनरत समस्त शिक्षक-प्रशिक्षु हैं। इस शोध के लिए जामिया मिल्लिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में डी.एल.एड., हिंदी माध्यम में

अध्ययनरत 24 पुरुष तथा 26 महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं का अध्ययन किया गया। न्यादर्श (sample) के चयन में 'सोद्देश्य न्यादर्श तकनीक' (purposive sampling technique) का प्रयोग किया गया।

शोध उपकरणों का निर्माण तथा प्रदत्तों की संकलन प्रक्रिया

शोधक ने पूर्व चयनित न्यादर्श पर एक समूह के रूप में हिंदी वर्तनी संबंधी उनके ज्ञान का निदानात्मक परीक्षण किया। जिसके लिए शोधक ने एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा निर्मित दसवीं कक्षा की हिंदी की पाठ्यपुस्तक से आचार्य महावीर प्रसाद द्वारा विरचित 'स्त्री शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खण्डन' नामक निबंध का चयन किया। इस निबंध का चयन इसमें हिंदी भाषा के कुछ तत्सम शब्द रूपों तथा रूढ़ शब्दावली के प्रयोग के कारण किया गया। पूर्व परीक्षण में शोधक के द्वारा आचार्य महावीर प्रसाद द्वारा विरचित 'स्त्री शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खण्डन' नामक निबंध स्पष्टतः पढ़े जाने के साथ-साथ शिक्षक-प्रशिक्षुओं को अपनी उत्तर-पुस्तिकाओं में श्रुतलेख लिखने का भी निर्देश दिया गया। पूर्व परीक्षण के आधार पर शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनी संबंधी अशुद्धियों का विश्लेषण किया गया तथा इसके अनुसार उनकी वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण के लिए हस्तक्षेप कार्यक्रम का निर्माण किया गया। पूर्व परीक्षण के चार दिन पश्चात् त्रिदिवसीय हस्तक्षेप कार्यक्रम का संचालन किया गया। इस कार्यक्रम में शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनी संबंधी अशुद्धियों का निराकरण गद्य-अध्यापन की 'स्पष्टीकरण विधि' के माध्यम से किया गया।

इस विधि में शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा अशुद्ध लिखे गए शब्दों की शुद्ध वर्तनी तथा अर्थ, उपसर्ग, प्रत्यय, समास, संधि-विच्छेद, पर्यायवाची शब्द, विलोम शब्द, अर्थ प्रसार तथा वाक्य-प्रयोग के माध्यम से उन शब्दों का विश्लेषण करके समझाया गया। तदोपरांत, छात्रों की समझ की जाँच हेतु उन्हें एक-एक करके शोधक के द्वारा बोले गए शब्द श्यामपट्ट पर शुद्ध वर्तनी के साथ लिखने के लिए कहा गया। हस्तक्षेप कार्यक्रम का संचालन तीन दिवस तक चला। इसके चार दिन पश्चात् शिक्षक-प्रशिक्षुओं का पश्च परीक्षण किया गया, जिसमें उन्हें वही श्रुतलेख लिखने का निर्देश दिया गया जो उन्होंने पूर्व परीक्षण में लिखी थी। इस कार्यक्रम का एक अतिरिक्त लाभ यह हुआ कि शिक्षक-प्रशिक्षु शब्दों की शुद्ध वर्तनी के साथ-साथ उनके उचित अर्थ समझ पाए तथा

विश्लेषण विधि के माध्यम से पर्यायवाची, विलोम शब्द, उपसर्ग, प्रत्यय, संधि, समास आदि के विषय में भी सीख पाए। साथ ही शब्दों का वाक्य में प्रयोग कर पाने में भी सक्षम हो पाए।

प्रयुक्त सांख्यिकीय तकनीक

प्रस्तुत शोध में प्रयोगात्मक विधि के ‘एकल समूह पूर्व परीक्षण और पश्च परीक्षण अभिकल्प’ का प्रयोग किया गया है। प्राप्त प्रदत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण युग्मित न्यादर्श परीक्षण (Paired sample ‘t’ test) के द्वारा किया गया है।

उद्देश्य 1 से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण, परिणाम तथा उनकी व्याख्या

हिंदी माध्यम के पुरुष एवं महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा की गयी हिंदी की वर्तनीगत अशुद्धियों की तुलना करना।

तालिका 1 — उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम की संरचना

क्र.स.	शब्द	अर्थ	स्पष्टीकरण विधि	स्पष्टीकरण
1.	शोक	दुःख, खेद	विलोम	हर्ष
2.	विद्यमान	उपस्थित	प्रत्यय	विद्य+मान
3.	गृह-सुख	गृहस्थ सुख	समास	गृह-सुख (तत्पुरुष समास)
4.	धर्म-शास्त्र	धर्म संबंधी शास्त्र	समास	धर्म-शास्त्र (तत्पुरुष समास)
5.	संस्कृत के ग्रंथ	संस्कृत की पुस्तकें	अर्थ-प्रसार	संस्कृत भाषा में लिखी हुई बृहत् पुस्तकें
6.	कुशिक्षित	बुरी शिक्षा प्राप्त किये हुए	उपसर्ग	कु+शिक्षित
7.	सुशिक्षित	अच्छी शिक्षा प्राप्त किये हुए	उपसर्ग	सु+शिक्षित

तालिका 2 — स्वतंत्र न्यादर्श परीक्षण (Independent sample ‘t’ test)

वर्तनीगत त्रुटियाँ अंक	संख्या	माध्य	मानक विचलन	स्वतंत्रता-डिग्री	t का मान	p का मान	टिप्पणी
छात्र	24	22.3	13.9	48	1.26	0.21	सार्थक नहीं है*
छात्राएँ	26	17.1	15.0				

तालिका 2 से यह निष्कर्ष निकलता है कि पुरुष तथा महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

उद्देश्य 2 से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण, परिणाम तथा उनकी व्याख्या

हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव का अध्ययन करना।

तालिका 3 के अवलोकन से प्रतीत होता है कि t अनुपात 10.13 है तथा p का मान .000 है जो .01 विश्वस्तता के स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य

परीक्षण के श्रुतलेख में पूर्व परीक्षण की तुलना में निम्न वर्तनीगत अशुद्धियाँ की गयी हैं। अर्थात् उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को कम करने में प्रभावकारी सिद्ध हुआ है।

उद्देश्य 3 से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण, परिणाम तथा उनकी व्याख्या

हिंदी माध्यम के पुरुष एवं महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव की तुलना करना।

तालिका 3 युग्मित न्यादर्श परीक्षण (Paired Sample 't' Test)

	युग्म अंतर			t का मान	स्वतंत्रता डिग्री	p का मान (Sig. 2 tailed)
	माध्य लाभांक	मानक विचलन	माध्य की मानक त्रुटि			
वर्तनी संबंधी त्रुटियाँ पूर्व एवं पश्च परीक्षण	15.2	10.6	1.50	10.13	49	.000

तालिका संख्या 4 युग्मित न्यादर्श सांख्यिकी (Paired Sample Statistics)

	संख्या	माध्य लाभांक	मानक विचलन	माध्य की मानक त्रुटि
पूर्व परीक्षण	50	19.6	14.5	2.06
पश्च परीक्षण	50	4.3	4.8	0.68

परिकल्पना 2 को निरस्त किया जाता है। यह निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम का सार्थक प्रभाव पड़ता है। तालिका 4 के अवलोकन से परिलक्षित है कि पूर्व परीक्षण का माध्य लाभांक 19.6 है तथा पश्च परीक्षण का माध्य लाभांक 4.3 है। पश्च परीक्षण के निम्न माध्यांक से स्पष्ट होता है कि शिक्षक-प्रशिक्षुओं द्वारा पश्च

तालिका संख्या 5 के युग्म 1 का अवलोकन करने से स्पष्ट है कि पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं के पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण के संदर्भ में t का मान 8.59 है जो .05 तथा .01 दोनों स्तरों पर सार्थक है जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को कम करने में उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम प्रभावकारी है। इसी प्रकार महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं के पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण

तालिका 5 युग्मित न्यादर्श परीक्षण (Paired Sample t Test)

	युग्म अंतर			t का मान	स्वतंत्रता डिग्री	p का मान (Sig. 2 tailed)
	माध्य लाभांक	मानक विचलन	माध्य की मानक त्रुटि			
युग्म 1 वर्तनीगत त्रुटि (छात्र) पूर्व-वर्तनीगत त्रुटि (छात्र) पश्च	17.3	9.87	2.01	8.59	23	.000
युग्म 2 वर्तनीगत त्रुटि (छात्राएँ) पूर्व-वर्तनीगत त्रुटि (छात्राएँ) पश्च	13.3	11.12	2.18	6.10	25	.000

तालिका संख्या 6 युग्मित न्यादर्श सांख्यिकी (Paired Sample Statistics)

		माध्य लाभांक	संख्या	मानक विचलन	माध्य की मानक त्रुटि
युग्म 1	वर्तनीगत त्रुटि (छात्र) पूर्व	22.3	24	13.9	2.83
	वर्तनीगत त्रुटि (छात्र) पश्च	5.0	24	4.53	0.92
युग्म 1	वर्तनीगत त्रुटि (छात्राएँ) पूर्व	17.12	26	15.03	2.95
	वर्तनीगत त्रुटि (छात्राएँ) पश्च	3.81	26	5.15	1.01

के संदर्भ में t का मान 6.10 है तथा p का जो न केवल .05 स्तर पर अपितु .01 स्तर पर भी सार्थक है। जिससे यह स्पष्ट चलता है कि महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के सुधार पर उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

तालिका संख्या 5 का अवलोकन करने पर हम पाते हैं कि पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण में पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के माध्य का लाभांक 17.3 है। पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण में महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के माध्य का लाभांक 13.31 है। महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं का लाभांक पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं की तुलना में कम होने का आशय यह है कि पश्च परीक्षण में महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं ने पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं की तुलना में वर्तनी संबंधी अशुद्धियाँ कम की हैं।

शोध के परिणाम व निष्कर्ष

1. पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं तथा महिला प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को कम करने में प्रभावकारी है।
3. उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं की तुलना में महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को कम करने में अधिक प्रभावकारी सिद्ध हुआ है।

शोध के निहितार्थ

प्रस्तुत शोध से यह स्पष्ट है कि पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं तथा महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों में कोई सार्थक अंतर न होने का अर्थ संभवतः यह भी है कि प्राथमिक स्तर पर हिंदी भाषा

की वर्तनी सिखाने में पुरुष तथा महिला में कोई अंतर नहीं होता है। उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को कम करने में प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। अतः प्राथमिक स्तर के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों का समान प्रकार के हस्तक्षेप कार्यक्रमों के माध्यम से निराकरण किया जा सकता है। उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम पुरुष शिक्षक-प्रशिक्षुओं की तुलना में महिला शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को कम करने में अधिक प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। इसका कारण संभवतः यह है कि सामान्यतः महिलाएँ पुरुषों की तुलना में अधिक तीव्र गति से भाषा सीखती हैं तथा भाषा को शुद्ध रूप में बोलने का आदर्श अनुकरण शीघ्रता से कर लेती हैं।

आगे शोध के लिए सुझाव

- हिंदी भाषा के शुद्ध रूप को लिखना सिखाने के लिए वर्तनी-शुद्धि अति आवश्यक है। इसके लिए उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम अत्यंत सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अतः इनके प्रयोग द्वारा भाषा शुद्धि की जानी चाहिए।

- उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम केंद्रित समान प्रकार के शोध विभिन्न स्तर के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों को दूर करने हेतु किये जा सकते हैं।
- न केवल शिक्षक-प्रशिक्षुओं अपितु सभी अकादमिक स्तरों के विद्यार्थियों की वर्तनीगत अशुद्धियों को हस्तक्षेप कार्यक्रमों के माध्यम से दूर किया जा सकता है।
- कुछ हस्तक्षेप कार्यक्रम न केवल वर्तनी-शुद्धि अपितु उच्चारण-शुद्धि हेतु भी बनाये जा सकते हैं।
- विद्यालयी शिक्षकों की वर्तनीगत अथवा उच्चारण संबंधी अशुद्धियों के निराकरण हेतु भी कुछ आवश्यकता-केंद्रित उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम बनाये जा सकते हैं तथा सरकारी व निजी विद्यालयों के शिक्षकों पर प्रयोग किये जा सकते हैं।

कुछ उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम न केवल हिंदी भाषा, बल्कि अन्य भाषाओं के शुद्ध लिखित अथवा उच्चारित रूप को सीखने/सिखाने के लिए बनाये जा सकते हैं।

संदर्भ

- तिवारी, भोलानाथ. 2011. *हिंदी भाषा की संरचना*. वाणी प्रकाशन. नयी दिल्ली.
- दहिया, इंदु. 2015. 'वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के उपचारीकरण में अध्येता केंद्रित तथा कार्यकलाप-आधारित अधिगम-अध्यापन उपागम की प्रभावशीलता का प्रायोगिक अध्ययन'. *अन्वेषिका — अध्यापक शिक्षा की पत्रिका*. खंड 10 (1). राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्, नयी दिल्ली, पृष्ठ 1-17.
- मिल्स, जी. ई. एवं आर.एल. गे, 2017. *शैक्षिक अनुसंधान*. बारहवाँ संस्करण. पियर्सन एजुकेशन. लंदन, इंग्लैंड.
- सिंह, सावित्री. 1992. *हिंदी शिक्षण*. लॉयल बुक्स पब्लिकेशन लिमिटेड, मेरठ.

हिंदी बाल काव्य का बदलता स्वरूप और बच्चे

टीना कुमारी*

समयानुरूप बदलते काव्य में बच्चों की आकांक्षाएँ, उनका व्यवहार, स्वभाव बखूबी उभरा है। बच्चों के मस्ती भरे रोचक कारनामों और खयालों से लेकर आधुनिकता के साथ उभरे बच्चे का अकेलापन और दोस्तों का अभाव सब कुछ कविताओं में बिखरा है। बाल काव्य की यात्रा के दौरान प्रवृत्तियाँ एवं मिजाज भी बदले हैं। यह लेख हिंदी बाल काव्य के बदलाव को ही करीब से देखता है। काव्य केवल तथ्यों के साथ ही नहीं कविताओं के बदलते मिजाज को उदाहरण सहित समझने की कोशिश करता है। लिखित रूप में पिछले सौ वर्षों के दौर का काव्य मोटे तौर पर कैसा दिखता है और बच्चों से कैसे जुड़ता है आदि की एक कड़ी देखने को मिलती है।

बाल साहित्य का मूल आशय बालक के लिए सृजनात्मक साहित्य से है। बाल साहित्य का उद्देश्य बाल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं, अपितु उन्हें आज के जीवन की सच्चाइयों से भी परिचित कराना है। प्राचीन बाल साहित्य के रूप में लोक कथाएँ, लोरियाँ और खेलगीत लिए जा सकते हैं। युग परिवर्तन के साथ-साथ इनका मौखिक आदान-प्रदान होता रहा है। बाल साहित्य की सुरमयी धारा है — बाल काव्य। बाल साहित्य के विविध अंगों में बाल्य काव्य का विशिष्ट स्थान है। सामान्यतः नवजात से 16 वर्ष की आयु को बालपन माना गया है और इनके लिए लिखा काव्य बाल काव्य है। पाँच से चौदह वर्ष तक का बाल वर्ग बाल काव्य से जुड़ा वास्तविक वर्ग है

(डोभाल, 1990)। बाल काव्य में तुकबंदी, लोरी, पहेलियाँ, शिक्षाप्रद कविताएँ, चुटकुले, जीभ के करतब और अंग्रेजी राइम्स से प्रभावित कविताएँ रखी जा सकती हैं (घोष एवं कुमार, 1999)। हिंदी बाल काव्य में लोरियों एवं शिशु गीतों की समृद्ध धारा है। बाल काव्य में खेल गीतों को भी समाहित किया गया है। हिंदी बाल काव्य बालक के जीवन में छुटपन से ही लोरियों के रूप में घुलने लगता है। बाल कविता का नटखट अंग शिशु गीत यदि अच्छे हों तो बच्चे के मन पर एक तरह का स्थायी छाप छोड़ते हैं और बड़े होने पर भी उनका प्रभाव फ्रीका नहीं पड़ता। कविताएँ वर्णन करने का स्वाभाविक तरीका भी बखूबी सिखाती हैं। बच्चों में कल्पनाओं की गति अत्यधिक तीव्र होने पर

*शोधार्थी, पी.एच.डी. (द्वितीय वर्ष), शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

कभी-कभी असंगत और असंबद्ध हो जाती है। बच्चे ऐसी कल्पनाओं की अभिव्यक्ति बालगीतों में पाकर आनंदित होते हैं। इस प्रकार के बाल गीत निरर्थक बाल गीत कहे जाते हैं। इनमें कल्पना की विचित्रता होती है जो प्रसन्नता देती है —

दूध जलेबी जगगा.....

उसके अंदर मगगा.....

राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार बाल काव्य का सूत्र लोरी है। वे 3-5 वर्ष के बच्चों हेतु 4-8 पंक्तियों वाली तुकान्त ध्वन्यात्मक शब्दों वाली लयबद्ध कविताओं को उचित मानते हैं। आरंभ में बाल साहित्य बड़ों के लिए लिखे गए साहित्य के रूप में ही था फिर इन्हीं से बच्चे लाभान्वित होने लगे। शनैः शनैः शिशु गीतों और बाल कविताओं ने भी जन्म लिया। बाल काव्य बच्चों की सजीव कल्पना और सहज भावनाओं की अभिव्यक्ति का सुंदर माध्यम बना। बच्चे के मन में अपने परिवेश, घर, परिवार, आसपास के माहौल और दुनिया की पहली छाप इन्हीं कविताओं से पड़ती है। ये नटखट कविताएँ केवल कविताएँ नहीं, बल्कि बच्चों के लिए रंग-बिरंगे खिलौने भी हैं। जिनसे वह मनमाने ढंग से खेलते हैं। वह हँसता है, किलकता है और यहाँ तक कि उसके साथ-साथ स्वयं भी रचता है और अपनी कल्पना की भूख शांत करता है —

चूहे राजा हैं शैतान

चलते हरदम सीना तान

इसीलिए तो बिल्ली मौसी

खींचा करती उनके कान।

कलकत्ते से गाड़ी आई

टॉफी, बिस्कुट, केले लाई

गाड़ी बोली ई- ई- ई....

आहा! उसने सीटी दी...।

अमीर खुसरो की कुछ मुकरियों और पहेलियों द्वारा भी बाल काव्य की झलक मिलती है, उदाहरणार्थ —

एक थाल मोती से भरा। सबके सिर पर औंधा धरा।

चारों ओर वह थाली फिरे। मोती उसमें एक न गिरे।।

(आकाश)

भक्तिकालीन एवं रीतिकालीन कवियों द्वारा लिखी गई सरल भाषा वाली कुछ कविताएँ बालकों के लिए उपयोगी हैं। साथ ही रसखान एवं सूरदास द्वारा ‘श्रीकृष्ण का बाल वर्णन’ अद्वितीय है। किंतु ये सभी बाल काव्य की श्रेणी के पैमानों पर पूरी तरह से खरे नहीं उतरते। बाल कविता बालमन के निकट की बालक के लिए रचना होती है। जबकि बालक द्वारा रचित रचना बड़ों के लिए भी हो सकती है और प्रायः होती है। बच्चे भी बड़ों से ज्यादा बात कहने की क्षमता रखते हैं। बाल कविता अपने समय के बच्चे से ही प्रेरणा के लिए होती है। उदाहरण के लिए, समय विशेष की ज़रूरतें, प्रभाव, वातावरण इत्यादि का ध्यान होने से ही रचना सदा प्रासंगिक बनी रहती है। बाल काव्य अर्थात् बच्चों का काव्य। बाल्यावस्था की कुछ विशेषताएँ या प्रवृत्तियाँ, जैसे— जिज्ञासा, कल्पना, रचनात्मकता, निर्देश, संयम की प्रवृत्ति, आत्म प्रदर्शन की प्रवृत्ति, अनुकरण की प्रवृत्ति, स्पर्धा, सहानुभूति, विनय और आवर्तन इत्यादि होती हैं। ऐसा काव्य जो इन प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर लिखा जाए वही उत्तम काव्य है। कल्पना काव्य की भाषा होती है। बाल काव्य कल्पना वैभव से संपन्न काव्य है।

प्रकाशमनु की पुस्तक *हिंदी बाल कविता का इतिहास* में मोटे तौर से बाल कविता को निम्नलिखित तीन चरणों में बाँटा है —

1. प्रारंभिक युग (1901–1947)
2. गौरव युग (1947–1970)
3. विकास युग (1971)

स्वतंत्रता से पूर्व के समय में गुलामी के बंधनों को काटने के लिए बालकों के व्यक्तित्व निर्माण की प्रेरणा से शुरू-शुरू में सायास बाल कविताएँ लिखी गईं। वे देशभक्ति और उपदेशात्मकता के भार से अतिशय दबी हुई कविताएँ हैं। बाल काव्यकार बालक के व्यक्तित्व को आदर्शों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुसार ढालना चाहता था, अतः मनोवैज्ञानिक दृष्टि बाल काव्य में पूर्णतः विकसित नहीं हो पाई। किंतु इसी दौर में खड़ी बोली हिंदी कविता के जन्मदाताओं में से एक पंडित श्रीधर पाठक उल्लेखनीय हैं। हिंदी के प्रारंभिक बाल गीतकारों में गिने जाने वाले श्रीधर पाठक जी ने बाल स्वभाव, बाल-मनोवृत्ति एवं बाल-मनोविज्ञान का ध्यान रखते हुए सतर्कता के साथ-साथ बाल काव्य के लिए विषयों का चयन किया है। इनकी कविताओं का चंचल एवं खिलंदपन खास तौर से भाता है। इस कविता में भारतीय वातावरण की गर्मजोशी और बच्चे का लगाव एवं उसका कल्पना संसार दोनों ही बढ़िया ढंग से सामने आते हैं इसका एक उदाहरण इस प्रकार है —

“बाबा आज देल छे आए,
चिज्जी-पिज्जी कुछ न लाए,
बाबा क्यों नहीं चिज्जी लाए,
इतनी देली छे क्यों आए?.....”

इसी दौरान विद्याभूषण विभु की ‘घूम हाथी, झूम हाथी’ बड़ी चर्चित रचना रही। विद्याभूषण विभु ने हिंदी के प्रारंभिक दौर में अनेक सुंदर शिशु गीत लिखकर एक बड़े अभाव की पूर्ति की। इस काल में ‘शिशु’ एवं ‘बालसखा’ जैसी महत्वपूर्ण बाल पत्रिकाओं ने बाल कविता को आगे ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। “मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, अयोध्या सिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ जी के इस काल में बाल काव्य की हिंदी कविता में आगे चलकर जो रूप और प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ीं — चाहे नाटकीय ढंग की कथात्मक कविताओं का चलन हो या फिर ध्वन्यात्मक प्रभावों के जरिए बच्चों के मन को रिझाने और प्रभावित करने की कोशिश, बीज रूप में ये सभी चीजें हिंदी बाल कविता के इस दौर से आती हैं।” (मनु, 2003)

इस धारा में आगे का समय (1947 से 1970) यहाँ उभरी सुंदर एवं विविध प्रवृत्तियों को और विस्तार देने वाला रहा। हिंदी बाल कविता जितनी मुक्त और बहुरंगी इस दौर में थी, उसने जैसी अद्भुत उड़ानें भरी और जीवन जितना खुलकर नाटकीय संवेगों के साथ इस युग की बाल कविता में आया, वह अद्वितीय था। निरंकार देव सेवक, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, दामोदर अग्रवाल इत्यादि नामों ने इस दौर को बहुचर्चित एवं सदैव लुभावनी बनी रहने वाली बाल कविताएँ दीं। उदाहरणार्थ —

“इब्नबतूता पहन के जूता
निकल पड़े तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई,
थोड़ी घुस गई कान में....”

(सर्वेश्वरदयाल सक्सेना)

यह कविता एक अजब सी कॉमिक ट्रेजडी का आभास देती है। ‘इब्नबतूता’ जैसा कोई दमदार पात्र बाल काव्य में नहीं दिखता। इसी समय श्री प्रसाद जी की कविताएँ छंद और लय की उस्तादी और संपूर्णता का अहसास देती हैं। उदाहरणार्थ — ‘मुर्गे की शादी’ का रोचक चित्र देखिए—

“ढम-ढू, ढम-ढम ढोल बजाता
कूद-कूदकर बंदर
छम-छम घूँघरू बाँध-बाँध नाचता
भालू मस्त कलंदर,
कुहू-कुहू कू कोयल गाती
मीठा-मीठा गाना,
मुर्गे की शादी में है बस
दिन भर मौज मनाना।.....”

(श्री प्रसाद)

सोहनलाल द्विवेदी, सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह ‘दिनकर’, बालस्वरूप राही इत्यादि बाल काव्य की तेजपूर्ण विभूतियाँ इसी समय कार्यरत थीं।

दामोदर अग्रवाल रचित ‘बिजली’ पर लिखी सर्वोत्तम कविता इसी काल की है। बाल काव्य की यात्रा में रमेश तैलंग की यह कविता एक नया आयाम और पड़ाव देती है—

“अले छुबह हो गई
आँगल बुहाल लूँ
मम्मी के कमले की तीदें थमाल लूँ....”

इस कविता में एक बच्चा है और उसकी व्यस्तता के सभी कारण सच्चे हैं। यह सक्रिय और जिम्मेदार बच्चा काफ़ी हरफ़नमौला है और बच्चे की एक नई छवि देता है। रमेश तैलंग की यह कविता

बाल काव्य को एक नई सोच, बदलती छवियों और प्रतीकों की ओर मार्ग दिखाने में अद्वितीय है। 1971 अब तक का समय वह है जब एक नहीं, अपितु तीन से चार पीढ़ियों के कवि एक साथ बाल काव्य सृजन में लीन थे। इस दौर में दिविक रमेश, प्रयाग शुक्ल, चंद्रदत्त इंदु, गोपीचंद श्रीनगर इत्यादि कवि सृजन में लगे थे। यह जानना महत्वपूर्ण है कि इस दौर की कविता द्वारा पहली बार विचार तत्व का दखल दिखाई दिया। बच्चे पर बस्ते और पढ़ाई का बोझ तथा उसकी भीतरी दुनिया की उलझनें बाल कविता में नज़र आईं। कई प्रमुख बाल कवियों ने इस दौर में बच्चे के लगातार भारी होते हुए बस्ते के बोझ और उससे दबकर ‘मुक्ति’ के लिए कातर अनुरोध करते बच्चे के कारण, मार्मिक चित्र आदि अपनी कविताओं में उकेरे हैं। बच्चे की विवशता निहायत सच्चे और हृदयद्रावक के रूप में जैसी बाल कविता में प्रकट हुई है, वैसी शायद ही कहीं और सामने आई। इसी तरह आधुनिकता के साथ बच्चे का अकेलापन और दोस्तहीनता भी कविताओं में झलकी है। इस दौर की बाल कविता सपनों की घाटी में ही विश्राम नहीं लेती, बल्कि बदले हुए समय की मुश्किलों और आपदाओं से भी दो-चार होती है। हम देख सकते हैं कि बाल कविताओं की यात्रा के दौरान प्रवृत्तियाँ एवं मिजाज भी बदले हैं। बाल काव्य चाहे जैसे भी दौर से गुज़रा, किंतु यह सत्य है कि कविता ने पिछले सौ बरसों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी भारतीय बचपन का मानसिक और भावात्मक पोषण किया, उसे उन्मुक्त हँसी, उमंगें और मीठी खिला खिलाहटें दीं। बच्चों की कल्पना और जिज्ञासा-क्षितिजों का विस्तार

करके उसे सहृदय इंसान और बेहतर नागरिक बनाने की पुख्ता नींव रखी।

हिंदी बाल काव्य हमें भाषा और संप्रेषण के विकास की नींव प्रदान करता है। ध्वनि अपने प्राकृतिक परिवेश, परंपरा और सामाजिक रहन-सहन से संयोजित होती है। जिस प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश में बच्चों की मानसिकता का विकास होता है, बाल काव्य उससे ही प्रेरित हो भाषा का विकास करता है। इस साहित्य में झाँककर देखें तो हमें बच्चों के स्वभाव और विकास क्रम का एक रोचक परिचय मिलता है और भाषा की वाचिक धरोहर के एक महत्वपूर्ण हिस्से को देख पाते हैं। बाल काव्य की मौखिक धारा न जाने कब से बच्चों के भावों, संदर्भों, जीवन परिवर्तन को गति व विस्तार देते हुए एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को दे रही है। वर्तमान में बाल काव्य मौखिक परंपरा के लिए दादा-दादी का सानिध्य, संयुक्त परिवार, खेल मंडली इत्यादि माध्यमों का अभाव-सा होता जा रहा है। वहीं दूसरी तरफ, विद्यालयी जीवन कड़ा होता जा रहा है। कहीं-कहीं पाठ्यचर्या में कुछ स्तर पर बाल काव्य का प्रयोग भी

दिखता है, किंतु बालकाव्य परंपरा में जो अंतर आये हैं उन्हें खोजने और विचार करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

हिंदी बाल कविताओं का यह निर्विवाद गुण है कि वे सिर्फ बच्चों को संबोधित ही नहीं हैं, बल्कि पूरी तरह बच्चों की चीज़ हैं। बच्चों के खेलने एवं गाने-गुनगुनाने की चीज़ जिन पर पहला और आखिरी हक भी बच्चों का ही है। वे लिखी भले ही बड़ों द्वारा गई हों, मगर वे हैं बच्चों की चीज़ें। बाल काव्य अपने 100 वर्षों की परंपरा में विविधता और मात्रा दोनों स्तरों पर गहन हुआ है। पिछले 100 वर्षों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी भारतीय बचपन का मानसिक और भावात्मक पोषण इन कविताओं से हुआ है। हमारी 'श्रुति आधारित ज्ञान परंपरा' में भी कविताएँ अनवरत बहती-सी रही हैं। उन्मुक्त हँसी, उमंगें और मीठी खिल-खिलाहटों के साथ-साथ कविताओं ने बच्चों की कल्पना और जिज्ञासा-क्षितिजों का विस्तार करके उसे सहृदय इंसान और बेहतर नागरिक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

संदर्भ

- घोष, आशीष एवं कृष्ण कुमार (संपा). 1999. *गड़बड़झाला*. राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नयी दिल्ली.
डोभाल, कुसुम. 1990. *हिंदी बाल काव्य में कल्पना एवं प्रतीक तत्व*. लाइब्रेरी बुक सेंटर. मालीवाड़ा, दिल्ली.
मनु, प्रकाश. 2003. *हिंदी बाल कविता का इतिहास*. मेधा बुक्स, शाहदरा.

समावेशी शिक्षा में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया

अखिलेश यादव*

समाज का विकास मानवीय क्षमता के विकास पर निर्भर करता है। समाज में विकास के लिए सभी का सहयोग वांछित है। शिक्षा, समाज के विकास में सबसे महत्वपूर्ण कारक है। शिक्षा को व्यक्ति की दक्षता बढ़ाने का साधन ही नहीं, बल्कि लोकतंत्र में सक्रिय भागीदारी निभाने और अपने सामाजिक जीवन-स्तर में सुधार के लिए भी आवश्यक माना जाता है। भारत में दिव्यांगों की संख्या अधिक है और इनके विकास के बिना देश का पूर्ण विकास संभव नहीं है। भारत में दिव्यांगों के लिए शिक्षा व्यवस्था का एक बदलता स्वरूप दिखाई दे रहा है वो है — ‘समावेशी शिक्षा’।

समावेशी शिक्षा केवल एक दृष्टिकोण ही नहीं, बल्कि एक माध्यम भी है, विशेषकर उन लोगों के लिए जिनमें कुछ सीखने की ललक होती है और जो तमाम अवरोधों के बावजूद आगे बढ़ना चाहते हैं। यह इस बात को दर्शाता है कि सभी युवा चाहे वे सक्षम हों या विभिन्न रूप से सक्षम उन्हें सीखने योग्य बनाया जाए। इसके लिए एक समान स्कूल-क्रेच/पूर्व प्राथमिक विद्यालय, स्कूलों और सामुदायिक शिक्षा व्यवस्था तक सबकी पहुँच सुनिश्चित करना बेहद ज़रूरी है। यह सिर्फ लचीली शिक्षा प्रणाली से ही संभव है। भारत में दिव्यांग से संबंधित कानूनी प्रावधानों के इतिहास का प्रारंभ वर्ष 1944 में सार्जेंट रिपोर्ट से माना जाता है जिसमें यह कहा गया था कि दिव्यांगता यदि विशेष

विद्यालय के अनुकूल है तभी दिव्यांग व्यक्तियों को विशेष विद्यालय में भेजा जाना चाहिए। इसी बात पर कोठारी आयोग (1966-68) ने भी जोर दिया और दिव्यांग लोगों की शिक्षा को शिक्षा नीति का एक अभिन्न अंग माना। भारत में समावेशी शिक्षा की शुरुआत के लिए ‘दिव्यांगों के लिए समेकित शिक्षा’ योजना 1970 के दशक में प्रारंभ की गयी, जिसका उद्देश्य दिव्यांग बच्चों को सामान्य विद्यालय में शामिल करना व शैक्षिक अवसर प्रदान करने के साथ ही साथ सभी स्तर पर उन्हें समुदाय से जोड़ना था। इसके बाद अनेक योजनाएँ प्रारंभ की गयीं, परंतु समावेशी शिक्षा के क्षेत्र में वर्ष 2000 महत्वपूर्ण है जब एन.सी.ई.आर.टी. ने *विद्यालयी शिक्षा के लिए*

*शोधार्थी, शिक्षा शास्त्र विभाग, केंद्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

पाठ्यचर्या राष्ट्रीय की रूपरेखा 2000 में समावेशी विद्यालयों पर बल दिया। भारत में समावेशी शिक्षा के लिए वर्ष 2009 महत्वपूर्ण रहा क्योंकि इसी वर्ष 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम' पारित किया गया, जिसमें 6-14 वर्ष के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का संवैधानिक अधिकार प्रदान किया गया।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समावेशी शिक्षा के लिए 'सलमांका सम्मलेन' 1994 मील का पत्थर साबित हुआ। यह सम्मेलन जून 1994 में स्पेन के सलमांका शहर में आयोजित हुआ जिसमें 92 देशों के प्रतिनिधियों व 25 अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने भाग लिया। इस सम्मलेन का प्रमुख निर्णय था 'सभी के लिए शिक्षा जिसमें बच्चे, युवा और विशेष आवश्यकता वाले लोगों (दिव्यांगों) को सामान्य शिक्षा व्यवस्था में शिक्षा प्रदान करना।'

यूनेस्को (2016) के अनुसार, समावेशी शिक्षा का तात्पर्य उस शिक्षा से है जो —

1. यह विश्वास करती है कि सभी बच्चे सीख सकते हैं और सभी बच्चों की अलग-अलग प्रकार की विशेष आवश्यकताएँ होती हैं।
2. जिसका लक्ष्य सीखने की कठिनाइयों की पहचान और उनका प्रभाव न्यूनतम करना है।
3. जो औपचारिक शिक्षा से बाहर है और घर, समुदाय एवं विद्यालय से बाहर शिक्षा के अन्य अवसरों पर भी बल देती है।
4. अभिवृत्तियों, व्यवहारों, शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम एवं वातावरण को परिवर्तित करने की कालत करती है, ताकि सभी बालकों की विशेष आवश्यकताएँ पूरी हो सकें।

समावेशी शिक्षा

समावेशी शिक्षा से अभिप्राय है कि वह शिक्षा जिसमें दिव्यांग एवं अन्य सामान्य विद्यार्थी को एक साथ एक ही कक्षा में भेदभाव रहित वातावरण में शिक्षा प्रदान की जाये। जिससे दिव्यांग विद्यार्थी समाज में आसानी से समायोजित हो जाएँ। जैसा कि एन.सी.एफ़. 2005 में बतलाया गया है कि समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की ज़रूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में वह चाहे स्कूल में हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की ज़रूरत है। स्कूलों को ऐसे केंद्र बनाए जाने की आवश्यकता है जहाँ बच्चों के जीवन की तैयारी कराई जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चों, खासकर शारीरिक या मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों, समाज के हाशिए पर जीने वाले बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को शिक्षा के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के सबसे ज़्यादा फ़ायदे मिलें।

यूनिसेफ़, यूनेस्को की रिपोर्ट, एन.सी.एफ़. 2000 एवं 2005 में बतलाया गया है कि समावेशी शिक्षा में दिव्यांग (शारीरिक दिव्यांग, दृष्टि बाधित दिव्यांग, वाक् बाधित दिव्यांग, स्वलिनता, सीखने की अक्षमता युक्त दिव्यांग), शैक्षिक पिछड़े, भाषायी अल्पसंख्यक, सामाजिक-आर्थिक रूप से कमज़ोर बच्चे, ग्रामीण पृष्ठभूमि के बच्चे, जनजातीय बच्चे, घुमंतू समाज के बच्चे, कामकाजी समूह के बच्चे आदि शामिल हैं।

विद्यार्थी एवं शिक्षक — समावेशी शिक्षा

स्कूलों में अक्सर हम कुछ गिने-चुने बच्चों को ही बार-बार चुनते रहते हैं। जिससे इस छोटे समूह को तो ऐसे अवसरों से फ़ायदा होता है उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और वे स्कूल में लोकप्रिय हो जाते हैं। लेकिन दूसरे बच्चे बार-बार उपेक्षित महसूस करते हैं और स्कूल में पहचाने जाने और स्वीकृति की इच्छा उनके मन में लगातार बनी रहती है। तारीफ़ करने के लिए हम श्रेष्ठता और योग्यता को आधार बना सकते हैं, लेकिन अवसर तो सभी बच्चों को मिलने चाहिए और सभी बच्चों की विशिष्ट क्षमताओं को भी पहचाना जाना चाहिए और उनकी तारीफ़ होनी चाहिए। इसमें विशेष ज़रूरतों वाले बच्चे भी शामिल हैं, जिन्हें दिए गए काम को पूरा करने में ज़रूरत समय या मदद की ज़रूरत होती है। ज़्यादा अच्छा होगा अगर शिक्षक ऐसी गतिविधियों की योजना बनाते समय कक्षा में बच्चों से चर्चा करें और यह सुनिश्चित कर लें कि प्रत्येक बच्चा अपना योगदान दे पाए। इसीलिए योजना बनाते समय, शिक्षकों को सभी की भागीदारी पर विशेष ध्यान देने की ज़रूरत है। यह उनके प्रभावी शिक्षक होने का सूचक बनेगा। स्कूल प्रशासकों और शिक्षकों को यह समझना चाहिए कि जब भिन्न सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और भिन्न क्षमता स्तर वाले लड़के-लड़कियाँ एक साथ पढ़ते हैं तो कक्षा का वातावरण और भी समृद्ध तथा प्रेरक हो जाता है।

सभी प्रकार के बच्चों जैसे आर्थिक रूप से कमज़ोर (गरीब), कामकाजी बच्चों को शामिल कर, सुदूर ग्रामीण बच्चे, घुमंतू जनजाति के बच्चे,

किसी निदिष्ट स्थान पर रहने वाले बच्चे, विशेष आवश्यकता वाले बच्चे, भाषायी अल्पसंख्यक और सीखने की अक्षमता युक्त बच्चों आदि को समावेशी शिक्षा द्वारा शिक्षित किया जाना चाहिए।

समावेशी शिक्षा में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। समावेशी शिक्षा की कक्षा प्रक्रिया में शिक्षक के दृष्टिकोण (अभिवृत्ति) एवं व्यवहार महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। राम (2014) ने अपने शोध कार्य में पाया कि शिक्षकों का दिव्यांग विद्यार्थियों से प्रश्न न पूछना एवं उनके गृह कार्य की जाँच को अन्य विद्यार्थियों के समान न करना, इस प्रकार का व्यवहार इन बच्चों को बहिष्करण की तरफ धकेलता है। शिक्षकों का इस प्रकार का दृष्टिकोण एवं व्यवहार समावेशी शिक्षा के गठन एवं सफल संचालन में कठिनाई उत्पन्न करता है। सामान्यतः शिक्षक का दृष्टिकोण एवं व्यवहार दिव्यांग विद्यार्थियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण होता है शिक्षक इस प्रकार के विद्यार्थियों को अन्यो से कमज़ोर समझता है या उसकी यह अधूरी समझ होती है कि यह विद्यार्थी सीख नहीं सकते। जिससे ये बच्चे कक्षा में होते हुए भी अपने को कक्षा से अलग पाते हैं। ज़्यादातर शिक्षक दिव्यांग एवं अन्य इस प्रकार के विद्यार्थियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाते हैं। कलाम (2013) ने अपने शोध में बतलाया कि शिक्षकों को सहानुभूति के बजाय समानुभूति का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, जिससे ये विद्यार्थी अपने आप को कक्षा में अन्य विद्यार्थियों से भिन्न नहीं समझें। समानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण दिव्यांगों को अन्य विद्यार्थियों के समान मज़बूत बनने में सहायक होता है, जिससे समावेशी शिक्षा में कक्षा

की सीखने-सिखाने की प्रक्रिया एक पक्षीय न होकर द्विपक्षीय हो जाएगी।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया — समावेशी शिक्षा

एन.सी.एफ़. 2005 में समावेशी कक्षा शिक्षण के संबंध में बतलाया गया है कि 'रचनात्मक परिप्रेक्ष्य में, सीखना ज्ञान के निर्माण की एक प्रक्रिया है। विद्यार्थी सक्रिय रूप से पूर्व प्रचलित विचारों में उपलब्ध सामग्री/गतिविधियों के आधार पर अपने लिए ज्ञान की रचना करते हैं (अनुभव)। पूछताछ, अन्वेषण, प्रश्न पूछना, वाद-विवाद, व्यावहारिक प्रयोग व ऐसा चिंतन जिससे सिद्धांत बन सकें और विचार/स्थितियों की रचना हो सके ये सभी बच्चों की सक्रिय व्यस्तता को सुनिश्चित करते हैं।'

स्कूली शिक्षा में अधिगम का एक बड़ा हिस्सा अब भी व्यक्ति-आधारित है। अध्यापकों को 'ज्ञान' हस्तांतरित करने वालों के रूप में देखा जाता है। अध्यापकों को उन अनुभवों का आयोजक समझा जाता है जो बच्चों के सीखने में सहायक होते हैं। समावेशी शिक्षा में कक्षा शिक्षण प्रक्रिया और अधिगम प्रक्रिया के संबंध में यूनेस्को, एन.सी.ई.आर.टी. ने अपनी रिपोर्ट में कई महत्वपूर्ण सुझावों का वर्णन किया है जैसे कि यूनेस्को ने अपनी रिपोर्ट में समावेशी शिक्षा में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं —

1. कक्षा का वातावरण सीखने के लिए स्वस्थ एवं भेदभाव रहित हो।
2. शिक्षण विधि रोचक हो एवं विभिन्न उम्र समूह के अनुकूल हो तथा छात्रों को सीखने के लिए प्रेरित करने वाली हो।

3. शिक्षण मुख्यतः गतिविधि आधारित हो।
4. सभी सीखने वाले बच्चों की आवश्यकतानुसार सामग्री उपलब्ध करायी जाए (दृष्टिबाधित दिव्यांग, श्रवण विकार दिव्यांग आदि को ध्यान रखकर)।
5. शिक्षक, अभिभावक और नागरिक साथ मिलकर कार्य करें।
6. कक्षा शिक्षण की भाषा बच्चे के अनुसार (मातृभाषा) हो।
7. सभी बच्चों का शिक्षण, सुरक्षात्मक, लैंगिक उत्तरदायी एवं उत्साहजनक वातावरण में हो।

एन.सी.ई.आर.टी.(2017) ने समावेशी शिक्षा में कक्षा शिक्षण हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये —

- दृष्टि विकार दिव्यांग के शिक्षण हेतु — गैर दृष्टि आधारित तरीकों द्वारा सीखना, जैसे — स्पर्श वास्तविक, ठोस पदार्थ का प्रयोग। सुनना, जिसमें विस्तृत और वर्णनात्मक निर्देशों को अधिक उपयोग में लाना शामिल है। सुगंध और स्वाद — वास्तविक और ठोस पदार्थों की खुशबू और स्वाद का उपयोग करना। उपलब्ध विशेष शिक्षण सामग्री (ब्रेल, ट्रेलर फ्रेम और गणित, विज्ञान एवं अन्य किट) का उपयोग।
- श्रवण विकार दिव्यांग के शिक्षण हेतु — अन्य इंद्रियों का सीखने के माध्यमों के रूप में उपयोग (जैसे — इशारे, शारीरिक भाषा, हावभाव को पढ़ना), वास्तविक अनुभव प्रदान करने के लिए दृश्य के रूप में सामग्री का उपयोग, सीखी जाने वाली सामग्री को ध्वनि आधारित जानकारी के रूप में उपयोग में लाने के लिए यह समझ बनाना जरूरी है कि इन बच्चों के लिए किस तरह से शिक्षण कार्य किया जाए।

- शारीरिक अक्षमता दिव्यांग के शिक्षण हेतु — कक्षाओं को सुलभ बनाएँ, परीक्षाओं को पूरा करने में अतिरिक्त समय दें, कक्षा में बैठने के सुलभ साधन उपलब्ध कराएँ, संप्रेषण के वैकल्पिक साधनों यथा — ऑडियो रिकॉर्डर, हाव-भाव का प्रयोग, कंप्यूटर का उपयोग आदि।

समावेशी शिक्षा में कक्षा शिक्षण की संकल्पना सभी बालकों के समन्वित विकास पर आधारित होती है। अतः शिक्षक को कक्षा में उपस्थित बच्चों की विभिन्नता को ध्यान में रखते हुए शिक्षण कार्य करना चाहिए। विभिन्न रूप से समक्ष (दृष्टिबाधित दिव्यांग, वाक्बाधित दिव्यांग, श्रवण हास दिव्यांग आदि) बच्चों की विशेष आवश्यकताओं के मद्देनजर शिक्षण में शिक्षक को वातावरण को रुचिकर बनाना, आकर्षक एवं उपयुक्त विभिन्न शिक्षण सामग्रियों आदि का प्रयोग करना, शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में सभी बालकों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना आदि क्रियाओं को सम्मिलित करना चाहिए।

समावेशी शिक्षा में कक्षा शिक्षण कार्य जटिल प्रक्रिया है। समावेशी शिक्षा की कक्षा में विभिन्न रूप से सक्षम (शारीरिक, दृष्टिबाधित, श्रवण हास दिव्यांग) एवं सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के क्षेत्र से बच्चे होते हैं, जिनकी कुछ विशेष आवश्यकताएँ होती हैं। समावेशी विद्यालय की कक्षाओं में शिक्षक को विद्यार्थियों के अनुकूल शिक्षण विधि (सहकारी शिक्षण एवं परियोजना आधारित शिक्षण) का उपयोग किया जाना चाहिए जिससे सभी विद्यार्थियों का सीखना संभव हो जाए। अतः यहाँ इस बात पर ध्यान देना जरूरी है कि मामूली अक्षमताओं से ग्रस्त जिन बच्चों को मुख्यधारा के बाहर रखा

जाता है। उनकी जरूरतों को पूरा करने के साथ-साथ समावेशी शिक्षण पद्धति नियमित कक्षाओं में पहले से मौजूद ऐसे सैकड़ों विद्यार्थियों को भी लाभ पहुँचाती हैं जो मामूली से लेकर मध्यम दर्जे की सीखने की कठिनाइयों को अनुभूत करते हैं। इन कठिनाइयों को अधिकांशतः न तो पहचाना जाता है और न ही उनका समाधान किया जाता है। स्कूल में खराब प्रदर्शन के कारण इन बच्चों के स्कूल छोड़ देने का खतरा बना रहता है। वे कभी भी शैक्षणिक सफलता हासिल न कर सकने के अलावा अपने बड़े होने के पूरे दौर में सुधार न जा सकने वाले मनोवैज्ञानिक तथा भावात्मक आघातों से पीड़ित रहते हैं।

इस प्रकार समावेशी शिक्षा में कक्षा शिक्षण हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं—

1. कक्षा का वातावरण भेदभाव रहित सभी सीखने वाले के अनुकूल होना चाहिए जैसा एन.सी.एफ़. 2005 में बतलाया गया है कि 'सावर्जनिक स्थल के रूप में स्कूल में समानता, सामाजिक विविधता और बहुलता के प्रति सम्मान का भाव होना चाहिए, साथ ही बच्चों के अधिकारों और उनकी गरिमा के प्रति सजगता का भाव होना चाहिए। इन मूल्यों को सजगतापूर्वक स्कूल के दृष्टिकोण का हिस्सा बनाया जाना चाहिए और उन्हें स्कूली व्यवहार की नींव बनना चाहिए। सीखने की क्षमता देने वाला वातावरण वह होता है जहाँ बच्चे सुरक्षित महसूस करते हैं, जहाँ भय का कोई स्थान नहीं होता और स्कूली रिश्तों में बराबरी और जगह में समता होती है।'
2. कक्षा का शिक्षण व्यावहारिक ज्ञान से जोड़कर किया जाना चाहिए। समावेशी शिक्षा की कक्षा

शिक्षण विधि के रूप में सहकारी शिक्षण, परियोजना आधारित शिक्षण एवं सहयोगात्मक शिक्षण का उपयोग किया जाना चाहिए।

3. कक्षा शिक्षण में पाठ्यचर्या से जुड़ी सामग्री का उपयोग किया जाना चाहिए जैसे—मॉडल, चार्ट, मानचित्र, ऑडियो-विडियो, कंप्यूटर एवं आई.सी.टी. (सूचना संप्रेषण तकनीकी) का उपयोग करें। साथ ही शिक्षण कक्षा शिक्षण के पहले इन सामग्रियों की उपलब्धता भी सुनिश्चित करें।
4. कक्षा शिक्षण में विशेष रूप से सक्षम (दिव्यांग) को अधिक से अधिक सीखने की सामग्री उपलब्ध कराई जाए, जैसे—दृष्टिबाधित बच्चों को ब्रेल एवं श्रवण बाधित बच्चों को दृश्य आधारित सामग्री आदि।
5. सामान्य विद्यालय शिक्षकों को समावेशी शिक्षा को संदर्भ में रखकर प्रशिक्षण प्रदान किये जाएँ, उन्हें समावेशी शिक्षा प्रतिमान हेतु कक्षा शिक्षण दक्षता से युक्त बनाया जाए। अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं पाठ्यक्रम को समावेशी शिक्षा के संदर्भ में रखकर परिवर्तन की आवश्यकता है।
6. स्कूल स्तर पर पाठ्यचर्या का पुनर्विकास एवं पुनर्निर्धारण करने की आवश्यकता है, क्योंकि एन.सी.एफ. 2005 में इस बात का वर्णन किया गया है कि वर्तमान पाठ्यचर्या को समावेशी शिक्षा के अनुकूल निर्धारित किये जाने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

समावेशी शिक्षा में कक्षा शिक्षण कार्य छात्रों के अनुरूप एवं उनकी आवश्यकता को ध्यान में रखकर किया जाए। शिक्षण इस प्रकार से हो कि जो विद्यार्थियों को उनके घरेलू ज्ञान से जोड़कर दिया जाए। समावेशी कक्षा में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया शिक्षक केंद्रित से छात्र केंद्रित की तरफ बढ़नी चाहिए। छात्रों को सक्रिय अन्वेषक की तरह विकसित होना चाहिए और इसके लिए प्रेरक विचारों को बढ़ावा देने की रणनीति बहुत फायदेमंद हो सकती है। इस रणनीति का प्रयोग करने के लिए शिक्षक को खोजी शिक्षण के जरिए सभी छात्रों को उचित अनुभव, नियमों के विश्लेषण और सिद्धांत मुहैया कराने की ज़रूरत है। इसे ध्यान में रखते हुए समावेशी शिक्षण और कक्षा में विशेष रूप से सक्षम छात्रों के लिए लचीलापन लाए जाने को लेकर एन.सी.ई.आर.टी. ने हाल ही में पाठ्यक्रम अनुकूलन पर प्राथमिक पठन सामग्री तैयार की है। यह पठन सामग्री इस सोच पर आधारित है कि शिक्षक कक्षा में सभी छात्रों को अर्थपूर्ण शिक्षण अनुभव प्रदान कराएँ। सरल भाषा और अभिव्यक्ति का प्रयोग करें जो सभी छात्रों के लिए महत्व रखे। इस पठन सामग्री में कई उदाहरणों से बताया गया है कि कैसे समावेशी कक्षा में मौजूदा शिक्षण पद्धति को बदला जाए और छात्रों को स्वतंत्र रूप से सीखने वाला और इस प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनाए जाए।

संदर्भ

- एन.सी.ई.आर.टी. 2000. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000. एन.सी.ई.आर.टी, नयी दिल्ली. पृष्ठ 31, 73, 74 और 91.
- 2005. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. एन.सी.ई.आर.टी, नयी दिल्ली. पृष्ठ 28–31, 92, 96, 122–124 और 135.
- 2015. इनक्लूडिंग चिल्ड्रेन विद स्पेशल नीड्स, एन.सी.ई.आर.टी, नयी दिल्ली. पृष्ठ 36, 59 और 106.
- 2017. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का समावेशन — प्राथमिक स्तर. एन.सी.ई.आर.टी, नयी दिल्ली. पृष्ठ 21, 46 और 95.
- कलाम, अब्दुल. 2013. 'समावेशी शिक्षा और शिक्षक'. खोजे और जानें. अंक 7. विद्याभवन सोसायटी, उदयपुर. पृष्ठ 33.
- चडढा, अनुप्रिया. 2016. 'भारत में समावेशी शिक्षा की रूपरेखा'. योजना. अंक 1. प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली. पृष्ठ 33.
- दास, अनामिका. 2015. 'समावेशी शिक्षा की राह में रूकावटें'. लर्निंग कर्व. अंक 11. अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलुरु, पृष्ठ 76–79.
- मोहन, पेगी. 2016. 'समावेशी कक्षा में अध्ययन'. शैक्षिक संदर्भ. अंक 71–80. प्राप्ति स्रोत <https://www.eklavya.in>.
- यादव, अखिलेश. 2018. उच्च प्राथमिक कक्षाओं का समावेशी शिक्षा के संदर्भ में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का अध्ययन. अप्रकाशित शोध.
- यूनेस्को. 1994. द सलमांका स्टेटमेंट एंड फ्रेमवर्क फॉर एक्शन ऑन स्पेशल नीड्स एजुकेशन. यूनेस्को, सलमांका, स्पेन.
- 2005. गाइडलाइन फॉर इनक्लूजन — इनस्यारिंग एसेस टू एजुकेशन फॉर ऑल. यूनेस्को, पेरिस. पृष्ठ 102.
- 2009. टूवर्ड इनक्लूसिव एजुकेशन फॉर चिल्ड्रेन विद डिसेबिलिटी — गाइडलाइन. यूनेस्को, बैकांक. पृष्ठ 40–89 और 122.
- 2016. एजुकेशन एंड डिसेबिलिटी. यूनेस्को, नयी दिल्ली. पृष्ठ 146.
- यूनिसेफ, 2003. एग्जाम्पल ऑफ़ इनक्लूसिव एजुकेशन इंडिया. यूनिसेफ, काठमांडू. पृष्ठ 45, 63.
- राम, 2014. 'समावेशी शिक्षा के मायने', खोजे और जानें. अंक 8, विद्याभवन सोसायटी, उदयपुर, पृष्ठ 45.
- वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. 2014. अधिगम एवं शिक्षण (बी.एड.) वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. कोटा, राजस्थान.
- सिंघल, निधि. 2013. 'विकलांग बच्चों की शिक्षा', योजना, अंक 2. प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली, पृष्ठ 21–23.
- सिंह, अजय कुमार. 2008. 'भारत में समावेशी शिक्षा का स्वरूप'. परिप्रेक्ष्य. अंक 1. नीपा, नयी दिल्ली. पृष्ठ 81.
- सिंह, रजनी रंजन. 2014. 'भारत में समावेशी शिक्षा की दशा और दिशा'. परिप्रेक्ष्य. अंक 3. नीपा, नयी दिल्ली. पृष्ठ 01.

विद्यालय प्रबंधन समिति की भूमिका एवं कार्य

विक्रम कुमार*

प्रस्तुत लेख के द्वारा यह बताने की कोशिश की गई है कि विद्यालय प्रबंधन समिति का उचित संचालन कैसे किया जाए एवं समिति का विद्यालय में होना कितना महत्वपूर्ण है। विद्यालय प्रबंधन समिति विद्यालय के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यह विद्यालय के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को पूरा करने में एवं समाज का सहयोग प्राप्त करवाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। विद्यालय प्रबंधन समिति विद्यालय के सभी पक्षों को एक साथ जोड़े रखने में मदद करती है और सभी हितधारकों की भावनाओं के अनुरूप विद्यालय संचालन एवं विकास में भागीदारी प्रदान करती है।

भारतीय संविधान के 86 वें संशोधन के तहत लगभग आज़ादी के इतने सालों बाद शिक्षा के अधिकार को एक नया आयाम मिला और 1 अप्रैल 2010 को शिक्षा का अधिकार अधिनियम — 2009 (आर. टी.ई.) लागू किया गया। इस अधिनियम के तहत हर एक बच्चे को जो 6–14 वर्ष का है उसे निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा पाने का अधिकार प्राप्त है।

इस अधिनियम के खंड 21 में एक ऐसी समिति को गठित करने का प्रस्ताव रखा गया जिसमें विद्यालय, अभिभावक और समाज की प्रत्यक्ष भागीदारी हो। इसके साथ ही यह भी सुनिश्चित किया गया कि इस समिति में माता-पिता, अभिभावक एवं शिक्षक, शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति, जन प्रतिनिधि आदि की भागीदारी भी हो। जिसे विद्यालय प्रबंधन समिति का नाम दिया गया है।

विद्यालय प्रबंधन समिति का गठन एक ऐसी सामाजिक संस्था के रूप में किया गया जो विद्यालय में विकास के साथ-साथ विद्यालय के लक्ष्यों व उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में विद्यालय को निरंतर मार्गदर्शन दे। इसके साथ ही विद्यालय को एक लोकतांत्रिक एवं सामाजिक संस्था के रूप में प्रतिष्ठित करे।

विद्यालय प्रबंधन समिति की आवश्यकता निम्नलिखित कार्यों हेतु होती है —

- विद्यालय में आधारभूत सुविधाओं की समुचित व्यवस्था व रखरखाव के लिए
- विद्यालय के वित्तीय नियोजन की देखरेख व नियंत्रण के लिए
- विद्यालय को समाज से जोड़कर रखने के लिए
- विद्यालय के विकास की योजना बनाने के लिए
- विद्यालय की आवश्यकताओं की माँग सही

* स्कॉलर, पी.एच.डी., जामिया मिल्लिया, इस्लामिया विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली

पटल (सरकारी/स्थानीय निकाय) पर प्रस्तुत करने के लिए

- विद्यालय में शिक्षा की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए

विद्यालय प्रबंधन समिति की स्थापना व रूपरेखा

शिक्षा का अधिकार अधिनियम— 2009 के खंड 21 में विद्यालय प्रबंधन समिति का गठन किया गया है जिसमें विद्यालय समिति के सदस्यों की समिति सुझाई गई है। विद्यालय इसी आधार पर अपनी ज़रूरतों के अनुसार सदस्यों को शामिल करते हैं।

इस समिति का अध्यक्ष विद्यालय का प्रधानाचार्य होता है। विद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के माता-पिता इस समिति के सदस्य होते हैं। एक चयनित व मनोनीत प्रतिनिधि जो शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति हो। वह भी इस समिति का सदस्य होता है। स्थानीय विकास अधिकारी या प्रतिनिधि को भी सदस्य के रूप में शामिल करते हैं। विद्यालय के एक शिक्षक को शामिल किया जाता है जो समिति का संयोजक होता है। तीन ऐसे सदस्य होते हैं जो विद्यालय में गणित, विज्ञान और सामाजिक विज्ञान के शिक्षक होते हैं और इन्हें आमंत्रित सदस्य कहा जाता है।

21. (1) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट किसी विद्यालय में प्रवेश प्राप्त बालकों के माता-पिता या संरक्षक और शिक्षकों के निवारचित प्रतिनिधियों से मिलकर बनने वाली एक विद्यालय प्रबंधन समिति का गठन करेगा—

परंतु ऐसी समिति के कम-से-कम तीन चौथाई सदस्य माता-पिता या संरक्षक होंगे;

परंतु यह और कि अलाभित समूह और दुर्बल वर्ग के बच्चों के माता-पिता या संरक्षकों को समानुपाती प्रतिनिधित्व दिया जाएगा;

परंतु यह भी कि ऐसी समिति के पचास प्रतिशत सदस्य स्त्रियाँ होंगी।

(2) विद्यालय प्रबंधन समिति निम्नलिखित कृत्यों का पालन करेगी, अर्थात्—

क. विद्यालय के कार्यकरण को मॉनीटर करना;

ख. विद्यालय विकास योजना तैयार करना और उसकी सिफ़ारिश करना;

ग. समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी अथवा किसी अन्य स्रोत से प्राप्त अनुदानों के उपयोग को मॉनीटर करना; और

घ. ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करना, जो विहित किए जाएँ।

22. (1) धारा 21 की उपधारा (1) के अधीन गठित प्रत्येक विद्यालय प्रबंधन समिति ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, एक विद्यालय विकास योजना तैयार करेगी।

(2) उपधारा (1) के अधीन इस प्रकार तैयार की गई विद्यालय विकास योजना, यथास्थापित, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा बनाई जाने वाली योजनाओं और दिए जाने वाले अनुदानों का आधार होगी।

संदर्भ—निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम – 2009 (2009 का अधिनियम संख्यांक 25)।

विद्यालय यह ध्यान रखता है कि चुने गए कुल सदस्यों में 50 प्रतिशत महिलाएँ एवं 75 प्रतिशत विद्यालय में पढ़ने वाले बच्चों के अभिभावक अवश्य हों।

विद्यालय प्रबंधन समिति का कार्यकाल अधिकतम दो वर्ष का होता है। दो वर्षों का कार्यकाल पूर्ण होने पर इस समिति का पुनर्गठन किया जाता है। समिति में उन अभिभावकों को भी शामिल किया जाता है जिनके बच्चे विशेष आवश्यकता वाले हों। आर्थिक कमजोर वर्ग के अभिभावकों को भी समिति का सदस्य बनाया जाता है।

विद्यालय प्रबंधन समिति के कार्य

विभिन्न राज्यों के विद्यालय निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को ध्यान में रखते हुए अपने अनुसार अपने विद्यालय प्रबंधन समिति के कार्य निर्धारण करते हैं। शोधार्थी द्वारा दिल्ली के कुछ (20 सरकारी विद्यालय) विद्यालयों का सर्वेक्षण किया गया और हर विद्यालय से 5 विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्यों का साक्षात्कार किया गया। जिसमें यह पाया गया कि दिल्ली के सरकारी स्कूलों में विद्यालय प्रबंधन समिति के निम्नलिखित कार्य हैं—

- विद्यालय में काम सुचारू रूप से हो, इसमें सहयोग देना।
- अभिभावक व संरक्षक के साथ नियमित रूप से बैठक करना और बच्चों के बारे में उपयुक्त सूचना देना।
- विद्यालय के वातावरण को प्रभावी बनाना, जिससे अध्यापक एवं बच्चे नियमित रूप से सही समय पर विद्यालय में उपस्थित हो सकें।

- विद्यालय में आस-पास के सभी बच्चों का दाखिला और उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करना।
- शिक्षा अधिकार अधिनियम के अंतर्गत बच्चों के अधिकारों का निरीक्षण करना।
- विद्यालय में दिए जाने वाले मध्याह्न भोजन एवं पठन सामग्री की व्यवस्था एवं उसके सही प्रयोग में सहयोग करना।
- किसी भी तरह का अनुदान जो अन्य स्रोत से प्राप्त किया गया हो उसका सही उपयोग करना।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम खंड – 27 के अतिरिक्त अध्यापकों पर अन्य किसी गैर-शैक्षिक ज़िम्मेदारियों का भार न हो, उसका निरीक्षण एवं उसे सुनिश्चित करना।
- अनुसूची में दिए गए मानकों और मापदंडों के अनुकरण का निरीक्षण करना।
- बच्चों के अधिकारों के बारे में आस-पास के लोगों को आसान व रचनात्मक तरीके से बताना।
- इस बात का भी निरीक्षण करना कि दिव्यांग बच्चों को विद्यालय में नामांकन और दाखिला संबंधी सुविधा मिले और वे अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी कर सकें।
- विद्यालय विकास योजना समय पर तैयार करना और सुझाव देना।

विद्यालय प्रबंधन समिति की बैठकें

शोधार्थी द्वारा दिल्ली के कुछ विद्यालयों के सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि दिल्ली, शिक्षा निदेशालय ने स्कूल प्रबंधन समितियों की शक्तियों में वृद्धि के निम्नलिखित दिशा निर्देश दिए हैं—

- विद्यालय प्रबंधन समिति की बैठकें माह के प्रथम एवं तृतीय शनिवार को आयोजित होंगी।

यह भी कहा गया है कि विद्यालय अपनी सुविधा अनुसार बैठकों के दिन में परिवर्तन कर सकते हैं।

- विद्यालय प्रबंधन समिति की बैठकें विद्यालय समय से पहले या बाद में होंगी, ताकि शिक्षक कक्षा से अनुपस्थित न रहें। साथ ही वरिष्ठ शिक्षक को बैठक के संयोजक का भार सौंपा जाता है।
- विद्यालय प्रबंधन समिति के संयोजक या अध्यक्ष द्वारा टेलीफोन माध्यम से ही बैठक शुरू होने के कम से कम 24 घंटे पूर्व अधिसूचित करना होगा, ताकि सही समय पर सदस्य बैठक में भाग ले सकें।
- बैठक के संचालन की ज़िम्मेदारी अध्यक्ष की है। यदि किसी कारणवश अध्यक्ष ऐसा करने में असफल रहते हैं, तो उपाध्यक्ष भी बैठक बुला सकते हैं ताकि समिति का कोई काम न रुके।
- गैर-अनुसूचित बैठक का अनुरोध तभी किया जा सकता है जब 1/3 सदस्य लिखित रूप से अनुरोध देंगे और स्पष्ट विनिर्दिष्ट कार्यसूची हो। अध्यक्ष को अनुरोध के 7 दिनों के अंदर समिति को इस तरह की बैठक बुलाना होगी जिससे आपातकालीन परिस्थितियों से निपटना आसान हो सके।
- जिन विद्यालयों में दो शिफ्ट चलती हैं प्रत्येक वैकल्पिक माह में उन विद्यालयों में बैठक सुबह एवं शाम को विद्यालय प्रबंधन समितियों की संयुक्त बैठक होगी। ताकि समन्वय सुनिश्चित किया जा सके और आपस में भवन से संबंधित किसी भी तरह की कठिनाइयों को दूर किया जा सके।

विद्यालय में विद्यालय प्रबंधन समिति का दौरा

शिक्षा का अधिकार अधिनियम — 2009 के अंतर्गत विद्यालय प्रबंधन समिति द्वारा विद्यालय में हो रहे कार्यों की निगरानी की ज़िम्मेदारी विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्यों को दी गई है।

विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्य विद्यालयी समय के दौरान विद्यालय का दौरा कर सकते हैं, पर इससे विद्यालय के काम (कक्षा, प्रार्थना-सभा, खेल का मैदान आदि) में किसी भी प्रकार की बाधा न हो। साथ में अगर कोई सदस्य विद्यालय आता है तो उसे विद्यालय प्रबंधन समिति रजिस्टर में हस्ताक्षर करने होते हैं। विद्यालय प्रमुख को अपनी उपस्थिति के बारे में सूचित करना होता है।

छात्राओं के विद्यालय में विद्यालय प्रबंधन समिति की केवल महिला सदस्य ही दौरा कर सकती हैं। जबकि सह-शिक्षा वाले विद्यालय में महिला व पुरुष दोनों में से कोई भी विद्यालय का दौरा कर सकते हैं।

अभिलेखों का निरीक्षण एवं व्यय की जाँच

विद्यालय प्रबंधन समिति के किसी भी सदस्य द्वारा लिखित रूप में अनुरोध करने पर विद्यालय से संबंधित किसी भी अभिलेख के बारे में पूछा जा सकता है। साथ ही यह विद्यालय के प्रमुख की ज़िम्मेदारियाँ है कि वह अभिलेख देखने के अनुरोध पत्र की प्रतिलिपि पर पावती दें तथा वह 3 दिन के अंदर अभिलेख (रिकॉर्ड) उपलब्ध करवाएँ। शिक्षा अधिकार द्वारा जारी किए गए इस कदम से सदस्यों के बीच में उनकी भूमिका और ज़िम्मेदारियाँ की जागरूकता को बढ़ावा दिया

जा सकता है। साथ ही विद्यालय से संबंधित अन्य सभी समस्याओं का समय रहते समाधान भी किया जा सकता है।

विद्यालय प्रबंधन समिति की बैठक सहित विद्यालयों में किए गए सभी व्यय की रिपोर्ट विद्यालय प्रबंधन समिति की बैठक में प्रस्तुत की जानी चाहिए। साथ ही विद्यालय प्रबंधन समिति बैठक में विद्यालय के भवन व उनके अनुरक्षण में व्यय के बिल प्रस्तुत किए जाने चाहिए, विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्यों को यह अधिकार है कि वे व्यक्तिगत रूप से मरम्मत, अनुरक्षणों या खरीदी गई संपत्ति की जाँच कर सकते हैं। ताकि कार्यों एवं किये गए व्यय में पारदर्शिता बनी रहे एवं यह जाँच हो सके कि व्यय सही जगह व अनिवार्य कार्यों के लिए ही हुआ है।

विद्यालय प्रबंधन समिति द्वारा शिक्षण में भागीदारी

विद्यालय प्रबंधन समिति को सशक्त किया गया है कि वे उन बच्चों की पहचान करें जो अपनी उम्र के अनुकूल नहीं सीख पा रहे हैं।

विद्यालय प्रबंधन समिति विद्यालय में शैक्षिक रूप से कमजोर बच्चों की मदद के लिए विद्यालय परिसर में विशेष प्रशिक्षण तथा उपचारी शिक्षा कार्यक्रम का आयोजन कर सकते हैं। इसका प्रावधान आर.टी.ई. 2009 में किया गया है।

विद्यालय प्रबंधन समिति के सदस्यों को हटाना

विगत कुछ वर्षों में बहुत सारे शैक्षिक अनुसंधानों से यह बात निकल कर आई है कि समिति में कुछ एक

सदस्यों की बैठक में अनुपस्थिति विद्यालय प्रबंधन समिति के कार्यों में बाधाएँ डालती हैं। दिल्ली सरकार ने अपने निर्देशों में समिति के उन सदस्यों को हटाने का भी प्रावधान रखा है जो विद्यालय प्रबंधन समिति में अनुपस्थित रहते हैं।

विद्यालय प्रबंधन समिति के कुल सदस्यों में से 50 प्रतिशत सदस्यों की सहमति से समिति के सदस्यों को हटाया/बदला जा सकता है। साथ ही अगर विद्यालय प्रबंधन समिति का उपाध्यक्ष लगातार तीन विद्यालय प्रबंधन समिति बैठक में अनुपस्थित रहते हैं, तो विद्यालय प्रबंधन समिति के 2/3 सदस्यों का प्रस्ताव पास कर उन्हें विद्यालय प्रबंधन समिति के उपाध्यक्ष पद से हटाया जा सकता है।

विद्यालय प्रबंधन समिति को और बेहतर बनाने के लिए सुझाव

शोधार्थी द्वारा यह पाया गया कि विद्यालय प्रबंधन समिति का गठन विद्यालय के विकास के साथ-साथ सामाजिक परीक्षण, लोक भागीदारी एवं लोक सशक्तीकरण के लिए प्रभावी कदम है तथा इस भागीदारी को और सशक्त करने के लिए कुछ ठोस कदम और उठाए जा सकते हैं जैसे —

- सभी सदस्यों को अपनी भूमिका और जिम्मेदारियों की पूरी जानकारी हो।
- घर में बच्चों के लिए एक अच्छा माहौल, अच्छा विद्यालय बनाना, अच्छा कक्षा कक्ष बनाना एवं बच्चों के लिए एक अच्छा समुदाय बनाना ही विद्यालय प्रबंधन समिति का लक्ष्य होना चाहिए।
- उन चीजों पर ध्यान देना जैसे — विद्यालय में क्या है जो बहुत अच्छी नहीं है? ऐसा क्या है जो

विद्यालय अच्छा नहीं कर रहा? या हमें किसमें परिवर्तन करने की आवश्यकता है? अथवा हम किन अवसरों का लाभ उठा सकते हैं? हम अच्छी तरह क्या कर सकते हैं।

- आवश्यकताओं की प्राथमिकता निश्चित करना एवं उद्देश्य निर्धारित करना।
- कार्य योजना का निर्माण करना जिसमें कौन से काम कैसे, कब और किन-किन संसाधनों द्वारा पूर्ण किये जाएँ, शामिल होने चाहिए।
- सदस्यों की पूर्ण भागीदारी तथा उनकी सहमति प्राप्त करना। इसमें समिति द्वारा बनाई

गई योजनाओं को लोगों से साझा करना एवं लोगों को परिश्रम के लिए उत्साहित करना शामिल है।

- किसी भी कार्य योजना को चरणबद्ध तरीके से पूरा करना एवं कार्य योजना का अनुवीक्षण करना और जब आवश्यक हो, सुधारात्मक कदम उठाना।
- कार्य प्रगति के बारे में रिपोर्ट करना और असफलता पाने पर उत्सव मनाना जिससे सदस्यों में प्रोत्साहन एवं कार्यों को पूरा करने का उत्साह बना रहे।

संदर्भ

- एस्टर्न-ज्वाइस. 2001. स्कूल फ़ैमिली एंड कम्युनिटी पार्टनरशिप प्रिपेरिंग एड्यूकेटर्स एंड इम्प्रूविंग स्कूल्स. वेस्ट व्यू प्रेस, कॉलराडो.
- कुमार, विक्रम. 2013. ए स्टडी ऑफ़ स्कूल मैनेजमेंट कमेटी कन्स्टीट्यूटेड अंडर आर.टी.ई. अधिनियम – 2009. जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नयी दिल्ली.
- दिल्ली निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम – 2009 कानून. प्रपत्र सं. 520–533.
- भारत सरकार. निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम – 2009. भारत सरकार, नयी दिल्ली.

विज्ञान-गीत संगीत की शक्ति द्वारा विज्ञान का प्रभावी शिक्षण

रुचि वर्मा*

शिक्षक समाज की सर्वाधिक संवेदनशील इकाई है। शिक्षक का कार्य समाज में वर्षों से सम्मानजनक रूप से देखा जाता रहा है। एक शिक्षक का कार्य बहुआयामी है। वह बच्चों में छुपी हुई प्रतिभा को खोजता है और उनका पोषण भी करता है। हम सभी लोग यह भी महसूस कर रहे हैं कि समाज में से सामाजिक मूल्यों का लगातार हास हो रहा है। इसलिए शिक्षक शिक्षा की गुणवत्ता कसौटी पर है तथा इनके योगदान पर भी प्रश्न चिह्न लग रहे हैं। उपरोक्त संदर्भ में शिक्षकों की जवाबदेह की माँगें उठने लगी हैं। यदि हमें शिक्षकों को उनके व्यवसाय के प्रति जिम्मेदार और जवाबदेह बनाना है तो शिक्षा व्यवस्था में ऐसा वातावरण बनाना होगा, जहाँ वे स्वयं उत्तरदायित्व लेना पसंद करें। लेकिन शिक्षकों की जवाबदेही सुदृढ़ और सुनिश्चित करने से पहले उनके लिए एक वातावरण तैयार किया जाना चाहिए जिसका उल्लेख इस लेख में किया गया है। यह लेख विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में विज्ञान गीतों के प्रयोग एवं उनकी उपयोगिता को प्रस्तुत करता है। अतः यह स्पष्ट करता है कि विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को विज्ञान गीतों द्वारा कैसे रुचिकर, बोधगम्य और सरस बनाया जा सकता है। साथ ही यह लेख यह भी दर्शाता है कि इन गीतों के माध्यम से न सिर्फ वैज्ञानिक तथ्यों के प्रति समझ विकसित होती है वरन् मानवीय मूल्य एवं अन्य क्षमताओं का भी विकास होता है। जो बच्चे के सर्वांगीण विकास का आधार बनती हैं।

विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की जब भी बात चलती है तो एक महत्वपूर्ण बिंदु सामने आता है और वह है। सक्रिय भागीदारी का। चाहे वह क्रियाकलाप के माध्यम से हो, विचार-विमर्श या किसी प्रोजेक्ट पर कार्य करते हुए हो। विज्ञान शिक्षण का उद्देश्य है करके देखना और अनुभवों से सीखना। ये शब्द खाका प्रस्तुत करते हैं एक आदर्श विज्ञान कक्षा का।

लेकिन वस्तुस्थिति इससे कहीं विपरीत है। विज्ञान की कक्षा मात्र अक्षर ज्ञान की सीमाओं में बंध कर रह जाती है और वह भी बेहद नीरसतापूर्ण ढंग से। कारण अनेक हैं। हर पक्ष की अपनी दलीलें एवं अपनी समस्याएँ हैं। जैसे — सामग्री का अभाव, समय का अभाव इत्यादि हैं। लेकिन परिणाम एक ही है और वो है विज्ञान सीखने और समझने के प्रति बच्चों का रवैया बोझिल हो जाना।

*एसोसिएट प्रोफेसर, डी.ई.एस.एम., एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली 110 016

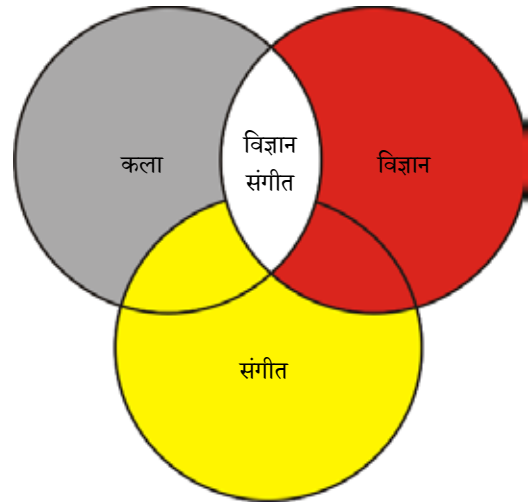
विज्ञान शिक्षण-अधिगम को रुचिकर, बोधगम्य और सरस कैसे बनाया जाए इस पर काम होता रहा है। इन्हीं प्रयासों में एक कड़ी और जुड़ी जब विज्ञान गीतों का निर्माण किया गया। विज्ञान-गीत क्या हैं यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है।

क्या है विज्ञान-गीत?

विज्ञान-गीत से तात्पर्य है विज्ञान की विषय-वस्तु को कविता, पद्यांश या धुन के साथ किसी गीत के रूप में प्रस्तुत करना। यानि विषय-वस्तु के नीरसतापूर्ण प्रस्तुतीकरण को जीवंत रूप देना। यह विज्ञान की विषय-वस्तु और संगीत कला का समन्वय है। कला का स्वयं का स्वभाव वैज्ञानिक है। विज्ञान और संगीत दोनों ही एक व्यवस्थित अध्ययन हैं। तो दोनों के समन्वय का प्रभाव भी वैज्ञानिक होना स्वाभाविक है। संगीत के प्रभाव के बारे में कहने कि आवश्यकता नहीं है। मस्तिष्क और मन दोनों ही इससे अछूते नहीं रहते हैं। संज्ञानात्मक विकास के साथ भावनात्मक, कलात्मक एवं सृजनात्मक विकास इसका परिणाम है। अंततः यह बच्चे के मनोवैज्ञानिक स्तर को प्रभावित करने का माध्यम है।

एक तथ्य यह भी है कि बिना भाषा के गीत का अस्तित्व नहीं हो सकता। संभवतः भाषा का विकास भी इसके प्रतिफल के रूप में प्रकट होना स्वाभाविक है जो कि शिक्षा व्यवस्था की मुँह बाएँ खड़ी एक चुनौती है। शोध के आँकड़े बताते हैं कि उच्च प्राथमिक स्तर तक बच्चे की भाषा पर पकड़ कमजोर नज़र आती है। तो यह माना जा सकता है कि विज्ञान-गीत वो साधन है जो विज्ञान, भाषा और कला को सींचता है। जहाँ

भाषा और कला का मेल हो वहाँ संस्कृति भी अछूती नहीं रहती। यानि हमारी सांस्कृतिक धरोहर को जीवंत रखने में विज्ञान-गीत कारगर भूमिका निभा सकते हैं।



विज्ञान-गीत का औचित्य

हकीकत में यदि देखा जाए तो विद्यालयों में प्रयोगशाला एवं अन्य सुविधाओं का स्तर कई बार संतोषप्रद नहीं होता है। इसी का नतीजा है कि विज्ञान को पढ़ने-पढ़ाने की कला बेहद नीरस तरीके से किताबों के अक्षरों को बाँचने एवं उनको सिर्फ स्मरण कर लेने तक सीमित हो जाती है, इसका परिणाम हमसे छुपा नहीं है। शोध इशारा करते हैं कि बच्चों में विज्ञान विषय के प्रति भय एवं अरुचि रहती है।

अधिगम प्रक्रिया की मूल ज़रूरत है शिक्षण विधियों में विविधता एवं नवाचार। हमारे प्रयास रहते हैं शिक्षण विधि के उन नवाचरों की ओर जो बच्चे को आनंदमयी अनुभूति के साथ सीखने की प्रक्रिया

से जोड़ सकें और प्रेरित कर सकें। विज्ञान गीत ऐसी ही अनुभूति का उदाहरण है।

वैदिक काल का स्मरण करें तो पाएँगे कि श्रवण क्रिया में शिष्य को गुरु द्वारा सम्प्रेषित ज्ञान का एकाग्रतापूर्वक श्रवण करना होता था, ताकि अगले पद के लिए स्वयं को मानसिक रूप से समर्थ बना सकें। गुरु द्वारा किए गए वाचन का स्वरूप संगीतमय होता था। संभवतः यह शिष्यों की एकाग्रता एवं रुचि बनाए रखने का प्रयास होता था।

कक्षायी अनुभव

उच्च प्राथमिक स्तर पर बच्चे शारीरिक, मानसिक और मनोवैज्ञानिक विकास की महत्वपूर्ण स्थिति से गुजर रहे होते हैं। उनकी अपनी सोच, अपनी इच्छाएँ जगह लेने लगती हैं। साथ ही स्थिति होती है असमंजस की। मन चाहता है खेलने-कूदने, गाने-गुनगुनाने, कुछ मजेदार करने को लेकिन किताबों से दोस्ती मज़बूरी लगने लगती है। साथ ही चारों तरफ से मिलने वाले दिशा निर्देशों के बीच एक दबाव महसूस होने लगता है। ऐसे में संगीत एक औषधि से कम प्रतीत नहीं होता। वैसे भी संगीत को तनाव दूर करने का सबसे कारगर उपाय माना गया है। यदि ऐसे में पढ़ने-पढ़ाने के तरीकों में संगीत को एक माध्यम बना कर उपयोग किया जाए तो क्या बच्चों की अनचाही और बिन-बुलाई समस्याओं से लड़ा नहीं जा सकेगा। यह तो हम सभी जानते हैं कि विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण मायने रखता है।

कुछ विज्ञान-गीतों के निर्माण के द्वारा इसी सोच को रूप दिया गया। अकसर देखा गया है कि वैज्ञानिक शब्दावली याद रखना एक चुनौती बन जाती है। कक्षा

6, 7 एवं 8 के विज्ञान की चुनिंदा विषय-वस्तु पर कुछ गीतों को रचा गया है। शब्दों का चयन इस स्तर के अनुरूप ही रखा गया, ताकि संदेश बोधगम्य हो। धुन का चयन भी इसी आधार पर किया गया जो सरल और सुगम होने के साथ बोधगम्य भी हो। ताकि उन्हें कोई भी बच्चा गा और गुनगुना सके और विषय-वस्तु को भावपूर्वक प्रस्तुत कर सके, क्योंकि मुख्य उद्देश्य विषय-वस्तु की समझ बनाना है। अतः गीतों को संदेशों के साथ जोड़ा गया है। जो वाचन, मनोरंजक नाटक, ध्वनि प्रभाव इत्यादि द्वारा प्रस्तुत किए गए। विज्ञान के साथ मूल्य भी जुड़े हैं। इन गीतों को मानवीय मूल्यों से भी जोड़ने का भी प्रयास किया गया है।

हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में गीतों का निर्माण किया गया। इन गीतों का मूल्यांकन भी शिक्षकों और बच्चों के बीच में किया गया। संयोग से इन गीतों के गायक भी अधिकांशतः विज्ञान के छात्र रहे जिनके अनुभव कहते हैं कि ऐसे गीतों का निर्माण सीखने की प्रक्रिया में वस्तुतः सहायक है।

हिंदी गीत

धातुओं से पहचान

यह गीत आधारित है धातुओं के भौतिक गुणधर्मों पर। इसके माध्यम से बच्चे जान सकेंगे कि धातुओं की श्रेणी में आने वाले पदार्थों में कुछ खास गुण होते हैं जिनसे उनकी पहचान की जा सकती है। इन गुणों के लिए विशेष शब्दावली भी है। ये शब्द उच्चारण की दृष्टि से क्लिष्ट प्रतीत होते हैं जैसे आघातवर्धनीयता एवं तन्यता। गीत की सरसता के माध्यम से इनके उच्चारण को सरल बनाने का प्रयास है।

धातुओं से पहचान

अपने चारों ओर देखो कितनी धातुएँ
पहचान करें हम कैसे, कौन सी हैं धातुएँ
रंग अनोखे इनके देखो, कैसे दिखती हैं धातुएँ
कोई सलेटी (जिंक), तो कोई लाल (ताँबा) कोई
पीली हैं धातुएँ (सोना)
ठोस, द्रव या गैस, किस अवस्था में हैं धातुएँ
सच बताएँ तो ज्यादातर कठोर अवस्था में हैं धातुएँ
चमक से देखो कैसी निखरी हैं ये धातुएँ
धात्विक चमक के कारण ही सराही जाती हैं धातुएँ
तन्यता के गुण को समेटे हैं धातुएँ
तभी तो तारों के जंजाल को बना पाती हैं धातुएँ
आघातवर्धनीयता है पहचान जिनकी, वही हैं धातुएँ
चादरों में फैली छटा है इनकी
ऐसी खूबसूरत हैं धातुएँ,
ताप व विद्युत से दोस्ती भी जोड़े हुए हैं धातुएँ
इन दोनों के प्रवाह को भी झेलती हैं धातुएँ
और पहचान क्या कराएँ, गुणों की खान हैं ये धातुएँ
हमारे जीवन को सुगम व सरल बनाती ये धातुएँ
अपने चारों ओर देखो कितनी धातुएँ
पहचान करें हम कैसे, कौन सी हैं धातुएँ
इस गीत को कक्षा में अनेक गतिविधियों के
साथ प्रस्तुत किया गया। सबसे पहले बच्चों को
गीत सुनाने के लिए माहौल बनाया गया। उन्हें गीत
के साथ ताली बजाने, टेबल पर ताल देने और साथ
गुनगुनाने के लिए प्रेरित किया गया ताकि वे गीत के
साथ जुड़ सकें। इस प्रकार गीत के बाद चर्चा प्रारंभ
हुई जिसमें संगीत विज्ञान मूल्यों पर उनकी राय माँगी

गयी। उन्होंने गीत के माध्यम से क्या सीखा कुछ प्रश्नों
के माध्यम से इसका उत्तर ढूँढ़ा गया। उन्हें गाना क्यों
पसंद आया जानने की कोशिश की गई। कौन से भाग
उन्हें कम पसंद आए और क्यों, इस पर भी चर्चा हुई।
गीत में आई वैज्ञानिक शब्दावलियों पर चर्चा की गई।
इसी परिचर्चा से शिक्षण बिंदुओं को निकालते हुए
विज्ञान के ज्ञान को जोड़ा गया। एक अच्छी बात यह
थी कि इस पूरी प्रक्रिया के दौरान बच्चों की भरपूर
भागीदारिता और जिज्ञासा देखने को मिली।

गीतों का उपयोग

गीतों का उपयोग भी अपने आप में चुनौतीपूर्ण है,
क्योंकि उद्देश्य विज्ञान के प्रति समझ का विकास करना
है। जितनी सृजनात्मकता गीतों के निर्माण में लगी है
उतनी ही गीतों के उपयोग में भी वांछित है। हर गीत
का प्रस्तुतीकरण विषय वस्तु की ज़रूरत के अनुसार
निर्धारित करना होगा। जैसे — प्रस्तावना के रूप में,
माहौल बनाने के लिए, कठिन शब्दों के उच्चारण के
लिए, विषय वस्तु के सरलीकरण के लिए इत्यादि।

इसी के साथ ज़रूरी नहीं गीत एक ही बार में पूरा
बजाया सुनाया जाये। इसे छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट
कर अलग-अलग गतिविधियों के साथ भी सोचा जा
सकता है। जैसे, कोई खेल खिलाते समय या कोई
क्रियाकलाप कराते समय भी गीत बजाया जा सकता
है। गीतों के साथ अन्य गतिविधियाँ जोड़ी जा सकती
हैं, जैसे — गीत पर म्यूज़िकल चेयर खेल खिलाया
जा सकता है। *कीबर्ड्स* पर गीत को रोका जा सकता
है और बीच में उस पर चर्चा की जा सकती है। बच्चों
को गीत लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता
है। विद्यालय के वार्षिकोत्सव में इन गीतों पर कार्यक्रम

प्रस्तुत किए जा सकते हैं। आई.सी.टी. का चलन शिक्षा जगत में सराहनीय भूमिका निभा रहा है। इन गीतों का प्रस्तुतीकरण चलचित्रों के द्वारा प्रभावशाली रूप में किया जा सकता है।

विज्ञान में प्रोजेक्ट विधि सराहनीय है। तो क्यों न एक प्रोजेक्ट मधुर स्वर लहरियों को दिया जाये। बच्चे खुद किसी विषय को चुनकर उस पर गाने के बोल और धुन बनाएँ। संभवतः इस कार्य के लिए विषय का गहरा ज्ञान और समझ जरूरी है। विषय वस्तु से संबंधित जानकारी वे स्वयं एकत्रित कर बोल बनाएँगे तथा इसकी रिकॉर्डिंग भी खुद ही कर सकते हैं। यह एक नए कौशल के विकास में भी सहायक होगा। इस प्रक्रिया में विषय के प्रति समझ एवं पर्यावरण से उसका संबंध समझ पाने में उन्हें सहायता मिलेगी। इस प्रकार का परियोजना कार्य ऐसे विद्यार्थियों के लिए

प्रेरणादायी होगा जो देख नहीं सकते, लेकिन गुनगुना सकते हैं। क्लीवलैंड म्यूज़ियम ऑफ़ नैचुरल हिस्ट्री (Cleveland Museum of Natural History) ने गीतों के निर्माण की इस विधि का प्रभावशाली उपयोग उच्च स्तर के विद्यार्थियों के साथ किया। यह विधि मूल्यांकन हेतु भी उपयोग में लायी जा सकती है।

गुनगुनाए गए शब्द कभी न भूलने वाले अनुभव बन जाते हैं और यही विज्ञान गीतों के साथ संभव है। संक्षेप में कहें तो इस अनुप्रयोग से संभवतः उन समस्याओं का समाधान हम ढूँढ़ सकेंगे, जो व्यावहारिक ज्ञान को विज्ञान से जोड़ती है। पढ़ाई जो बोझ महसूस होने लगती है, उसे गीतों के माध्यम से कर्णप्रिय बना कर एक पंथ दो काज की कहावत चरितार्थ कर सकेंगे। अंतोगत्वा विज्ञान के प्रति समझ विकसित होने के साथ ही सर्वांगीण विकास के अवसर प्रदान कर सकेंगे।

संदर्भ

एन.सी.ई.आर.टी., 2005. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

——— 2017. 'विज्ञान गीत मंजरी'. उच्च प्राथमिक स्तर, Audio DVD, एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा निर्मित, नयी दिल्ली.

——— 2017. 'साइन्स मेलोडीज'. उच्च प्राथमिक स्तर, Audio DVD, एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा निर्मित, नयी दिल्ली.

भावात्मक विकास

पूनम*

भाव मानसिक स्थिति को प्रभावित करने वाले होते हैं तथा शारीरिक या मानसिक उत्तेजना के समय सदा क्रियाशील होते हैं। जैविक या मनोवैज्ञानिक प्रेरकों की तरह भाव व्यवहार को क्रियाशील एवं निर्देशित कर सकते हैं। भावात्मक व्यवहार, अभिव्यक्ति और मानसिक प्रतिक्रियाओं का परस्पर मिश्रण है। मनोभाव का शारीरिक पक्ष विविध शारीरिक गतियों, जैसे — किन्हीं विशेष ग्रंथियों के स्राव, रक्त परिभ्रमण में तीव्रता, तीव्र हृदय स्पंदन आदि में प्रकट होता है। वहीं दूसरी ओर मानसिक भाव क्रोध, भय, दुःख और आनंद में फलित होते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इन्हें नियंत्रित किया जाना चाहिए जिसके लिए बच्चों को भावात्मक स्थिरता विकसित करने के लिए क्रियाएँ करवानी चाहिए। उन्हें भावात्मक रूप से अवश्य परिपक्व होना चाहिए। भावात्मक परिपक्वता का तात्पर्य यह नहीं है कि जीवन में भावनाओं और मनोभावों का अभाव हो। भाव जीवन के प्रेरक हैं और जीवन को जीवन के योग्य बनाते हैं। प्रस्तुत लेख में बच्चों के भावात्मक विकास पर चर्चा की गयी है।

भाव शब्द अंग्रेजी के *इमोशन* शब्द का हिंदी रूपांतरण है। *इमोशन* शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के *इमोवियर* से हुई है। भावों से आशय मस्तिष्क की उस अवस्था से है जो व्यक्ति को उत्तेजित कर देती है और तब उस पर भाव का प्रभाव पड़ता है और व्यक्ति उत्तेजित हो जाता है। जब हम बच्चों में भावात्मक विकास की बात करते हैं, तो पाते हैं कि बच्चे अनेक विभिन्न भावात्मक प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करते हैं। कई बार वे उत्तेजित और उल्लासित होते हैं तो कभी दुःखी

और उदास होते हैं और कभी किसी क्षण वे क्रोध प्रदर्शित करते हैं। भावात्मक व्यवहार अभिव्यक्ति और मानसिक प्रतिक्रियाओं का परस्पर मिश्रण है। भावात्मक अभिव्यक्ति का मानसिक पक्ष विशेषकर मानसिक भावों, जैसे — क्रोध, भय, दुःख और आनंद में फलित होता है। भावों का शारीरिक पक्ष विविध शारीरिक गतियों, जैसे — विशिष्ट ग्रंथियों से स्राव, रक्त परिभ्रमण की तीव्रता, तीव्र हृदय स्पंदन, पसीना आना आदि में अभिव्यक्त होता है।

* अध्यापिका, आई.आई.टी. नर्सरी स्कूल, नयी दिल्ली 110 016

भावात्मक विकास का क्रम

यदि हमें स्कूल जाने वाले किसी बच्चे के भावों को समझना है तो उसके आरंभिक वर्षों के भावात्मक विकास पर विचार करना आवश्यक है। कभी-कभी हम देखते हैं कि नवजात शिशु इस तरह व्यवहार करते हैं जैसे वे हिंसक रूप से उत्तेजित हैं। इस प्रकार के उत्साही व्यवहार का अर्थ उसके भावों की तीव्रता से है जिसका तात्पर्य यह है कि आरंभिक काल के अनुभव भी उतने ही तीव्र हो सकते हैं जितने कि वृद्धि के बाद की अवस्था में।

बच्चे विकास के दौरान प्रचुर और विविध भावात्मक अनुभव प्राप्त करने में सक्षम होते हैं। जन्म से 2 वर्ष तक की आयु में बच्चे को विविध अनुभव प्राप्त होते हैं। इसी समय वह अनेक भावात्मक अनुभवों से होकर गुजरता है जो जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोण को प्रभावित करते हैं।

मुख्यतः जन्म के समय सामान्य उत्तेजनाएँ मुख्य रूप से उसकी भूख और सुविधाओं से संबंधित होती हैं। लेकिन 2-3 महीनों के बाद बच्चा उल्लास के साथ व्यथा के निश्चित संकेत प्रकट करने लगता है और 6 महीने तक विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहनों के अनावृत होने के साथ बच्चा भावों की अन्य घटनाओं, जैसे — अपने कष्ट या असुविधाओं को प्रकट करने लगता है। उसमें भय, निराशा और क्रोध विकसित हो जाते हैं। अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि से उसे प्रसन्नता मिलती है और जब तक वह एक वर्ष पूरा करता है उसकी यह प्रसन्नता अपने आपको प्रेम से भिन्न कर लेती है। इस प्रकार से जैसे-जैसे बच्चा बढ़ता है वह अन्य लोगों की

भावनाओं को पहचानने लगता है और उनके प्रति स्पष्ट रूप से प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करने लगता है। इस प्रकार से बच्चे अपनी क्षमता के अनुसार भावात्मक भावों को व्यक्त करने के लिए विकास संबंधी बदलाव प्रकट करते हैं।

बाल भावों के लक्षण

- भावों की शारीरिक अभिव्यक्ति होती है। वे क्रोध से आगबबूला हो जाते हैं और भय से जड़ हो जाते हैं।
- प्रत्येक काल में भाव प्रकट होते हैं। जब बच्चे को क्षुब्ध किया जाता है तो वह क्रोधित हो जाता है।
- भाव विस्तृत होते हैं। डर का भाव बच्चों में सामान्यतः जागृत हो ही जाता है जिसे समाप्त किया जा सकता है।
- भाव का एक अन्य लाक्षणिक गुण उसकी सततता है। लेकिन, बच्चों के भाव अल्पकालीन एवं परिवर्तनशील होते हैं। भावों की परिवर्तनशीलता की प्रकृति एक भाव के अन्य भाव में तीव्र बदलाव में निहित रहती है। उदाहरण के लिए, हँसी से आँसुओं में, क्रोध से मुस्कुराहट और ईर्ष्या से प्रेम में।
- बच्चों के भाव तीव्र होते हैं। बच्चों में भावों के सहसा प्रस्फोटन की प्रवृत्ति होती है। उदाहरण के लिए, यदि कोई बच्चा रोता है, तो वह बहुत जोर से रोता है और आसानी से सँभलता नहीं है।
- भाव सृजनात्मक भी होते हैं तथा विनाशात्मक भी। बच्चे हँसते हैं, रोते हैं, भय, क्रोध और प्रेम भी प्रकट करते हैं। इन भावात्मक अभिव्यक्तियों के माध्यम से बच्चे अन्य व्यक्तियों से अपनी बात कहने में सक्षम होते हैं। साथ ही अपने वर्तमान

भावों, आवश्यकताओं और इच्छाओं की सूचना उन तक पहुँचा सकते हैं। मुस्कराहट, शिकन और क्रोध के प्रस्फोट अनेक सामाजिक कार्य करते हैं। यही भावात्मक अभिव्यक्ति सामाजिक संबंध बनाने में सहायता करती है। भावात्मक प्रदर्शन के द्वारा शिशु और छोटे बच्चे अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं को संप्रेषित कर सकते हैं। किसी व्यक्ति के भावात्मक विकास का उसकी खुशी पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

मनोभाव सृजनात्मक होते हैं और विनाशात्मक भी। ये व्यक्ति को बेचैन या चिंतित करते हैं तथा जीवन में उत्साह भी भरते हैं। शिशु पालन के अभ्यास का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों को तैयार करना है जो दर्द, दुःख और निराशा का सामना कर सकें, क्योंकि जीवन में इनसे बचा नहीं जा सकता। मनोभाव बच्चे को आनंद का रसास्वादन करने में सहायता करते हैं जो अपने जीवन काल में जिंदगी से मिलता है।

बाल्यकाल के सामान्य मनोभाव

भय

भय किसी खतरनाक स्थिति से स्वरक्षात्मक पलायन है। मनोवैज्ञानिकों और जीव वैज्ञानिकों दोनों ने ही भय का अच्छी तरह से अध्ययन किया है। उनके अनुसार, भय के दो मौलिक स्रोत हैं। पहला, तीव्र ध्वनि की आकस्मिकता से भय जागृत हो सकता है। यह भी देखा गया है कि अचानक ताली बजाने से भी शिशु डर जाते हैं। दूसरा, अचानक गिरने या सहारे के खोने से भय उत्पन्न हो जाता है। बच्चे अंधकार से भी डरते हैं, लेकिन यह डर सीखा हुआ होता है। इस प्रकार का

भय अनुकूलित भय कहलाता है। मृत्यु या गंभीर रोग या निर्धनता आदि के अधिकांश भय गलत प्रशिक्षण के कारण केवल जीवनकाल में सीखते हैं। बहुत बार यह भी देखा जाता है कि अपनी बात मनवाने के लिए माता-पिता डरावनी चीजों जैसे भूत या अंधकार के बारे में बातें करके अपने बच्चों को डराते हैं। इस प्रकार के प्रशिक्षण का बच्चों पर अत्यधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

छोटे बच्चों में भय विशिष्ट नहीं, बल्कि एक सामान्य परिघटना है। यथासमय किसी वस्तु, लोग या स्थिति के बारे में यह अधिक विशिष्ट बन जाता है। मूलतः उनका भय, अहमन्यवादी होता है। स्कूल-पूर्व के वर्षों में बच्चा सामाजिक अपयश और प्रतिष्ठा के नाश से डरने लगता है और अंधकार का भय प्रायः अकेले होने के भय से जुड़ा होता है। यह डर अकेला छोड़ दिए जाने का या परित्याग किए जाने का है।

शैशवकाल और लगभग पहली कक्षा के समय के बीच अधिकांश बच्चे पशुओं से डरते हैं। लेकिन धीरे-धीरे अपने पर्यावरण में पशुओं से परिचय होने के बाद यह डर कम हो जाता है।

प्रेम

बच्चे के सामान्य विकास के लिए प्रेम की महती आवश्यकता है। वह प्रेम करना और प्रेम पाना चाहता है। वह इस संसार में दूसरों पर पूर्णतः निर्भर होकर आता है। कुछ हद तक उसकी यह निराश्रयता उसकी शक्ति है, क्योंकि यह दूसरों को उसकी रक्षा और देखभाल के लिए प्रेरित करती है। बच्चे की देखभाल करने के इसी भाव के कारण माता (परिवार के अन्य सदस्य भी बच्चे को खिलाती-पिलाती है और उसे लाड़-दुलार देती है।

माता द्वारा उसकी यह देखभाल उसके प्रेम को प्रभावित करती है। प्रेम की भावनाएँ परस्पर होती हैं। माता-पिता को अपने बच्चों के प्रेम की आवश्यकता होती है और बच्चों को भी अपने माता-पिता का प्यार चाहिए होता है। प्रेम, सुख की प्रतिक्रिया है। बच्चे का व्यक्ति या वस्तु के प्रति प्रेम उसके साथ अपने संबंध से प्राप्त होने वाले सुख की अनुभूति के कारण उत्पन्न होता है।

प्रेम का भाव बच्चे के व्यक्तित्व के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। जिस बच्चे के प्रेम का मनोभाव पूर्णतः संतुष्ट होता है वह भाग्यशाली होता है और उसके व्यक्तित्व का स्वस्थ ढंग से विकास होता है। लेकिन दुर्भाग्यवश जो बच्चे प्रेम से वंचित रह जाते हैं वे मानसिक दुर्बलता के साथ कमजोर व्यक्ति या अविकसित व्यक्ति बनकर रह जाते हैं। परंतु यह भी उतना ही सत्य है कि माता-पिता का आवश्यकता से अधिक प्रेम बच्चों के जीवन में कई प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न करता है। एक सीमा से अधिक प्रेम बच्चों को परिवार पर अत्यधिक निर्भर बना देता है। इस प्रकार किसी भी प्रकार के आत्मविश्वास के अभाव में बच्चा वास्तविक और सच का सामना नहीं कर सकता। इसके साथ ही वह व्यावहारिक जीवन के परिवेश में अपने आपको ढाल पाने में असमर्थ हो जाता है। माता-पिता को अपने बच्चों को प्रेम करने में संतुलन के प्रति सावधान रहना चाहिए।

बच्चे के लिए सच्चे प्रेम का अर्थ है कि उसको स्वीकार कर लिया गया है। जिस बच्चे को स्वीकार कर लिया जाता है वह सभी प्रकार के डर से मुक्त हो जाता है। वह चीजों के साथ प्रयोग करने का, खोजने, गलतियाँ करने और प्रक्रिया में सीखने में संकोच का

अनुभव नहीं करता। वह किसी शरारतपूर्ण कृत्य या अवज्ञा के कृत्य में डरा हुआ अनुभव नहीं करता। माता-पिता का बच्चे के प्रति प्रेम जितना अधिक सच्चा होगा उतनी ही अधिक बच्चे में अन्य लोगों को प्रेम करने की प्रवृत्ति बढ़ेगी।

क्रोध

क्रोध को कष्ट और शत्रुता के प्रबल भाव के रूप में परिभाषित किया जाता है। क्रोध का प्रस्फोटन हिंसक होता है जो या तो स्वयं के प्रति या दूसरों के प्रति होता है। शैशवकाल से ही बच्चा क्रोध प्रकट करने में सक्षम होता है। सामान्यतः बच्चा जब भूखा होता है या कोई परेशानी होती है तब ही वह क्रोध प्रकट करता है। जैसे-जैसे बच्चे की मानसिक और प्रेरक योग्यताएँ परिपक्व होती जाती हैं तो उसके क्रोध को प्रोत्साहित करने के अवसर बढ़ जाते हैं। जैसे, जब कोई भी व्यक्ति या बात जो उसकी गतिविधियों में विघ्न डालते हैं या उसकी प्रतिष्ठा, योजनाओं, इच्छाओं या विचारों में हस्तक्षेप करते हैं। जब बच्चा दुर्बल, थका हुआ या भूखा होता है तब उसे शीघ्र क्रोध आ जाता है। माता-पिता या शिक्षक द्वारा अत्यधिक या अनावश्यक नियंत्रण भी कभी-कभी बच्चे को क्रोधित कर देता है।

बच्चे के क्रोध की प्रवृत्ति अल्पकालिक होती है। एक क्रोधित बच्चे को आसानी से शांत किया जा सकता है और उसको सामान्य व्यवहार में पुनः लाया जा सकता है। क्रोध को प्रायः ही विस्थापित किया जाता है। इसका अर्थ है कि कभी-कभी क्रोध का कारण बड़ा हो सकता है और उसे तुच्छ कारण के संबंध में अभिव्यक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, बच्चा माता-पिता के डाँटने पर क्रोधित हो

सकता है, लेकिन कुछ समय तक शांत बना रहता है और बाद में किसी अन्य गतिविधि जैसे खिलौने फेंकने के द्वारा अपना क्रोध प्रकट करता है। शारीरिक रूप से विकृत बच्चों या जिनको सीखने या समझने में कोई कठिनाई है, वे थोड़े से भी उकसाने पर क्रोधित हो जाते हैं।

हस्तक्षेप के विरुद्ध बच्चे का विरोध कभी-कभी नकारात्मकता का रूप धारण कर सकता है। सभी सामान्य बच्चे माता-पिता की सलाह को अनसुना करके या वह जो उनको करने के लिए कहा जाता है, उसके ठीक विपरीत करके प्रतिरोधात्मक व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। क्रोध की अभिव्यक्ति रोना या हल्की तानेबाजी में हो सकती है। जब बच्चा बड़ा हो जाता है तब वह अपने क्रोध को प्रकट करने के लिए कोसने, गाली-गलोच करने या कुछ विकट परिस्थितियों में अपने-आपको चोट पहुँचा सकता है। छोटे बच्चे अपना क्रोध सामान्यतः बड़ों के साथ सहयोग करने से मना करके अभिव्यक्त करते हैं। कुछ अन्य उन लोगों के प्रति बदले या घृणा की भावना विकसित कर लेते हैं जो उनको क्रोध न दिलाते हों।

क्रोध एक विनाशकारी मनोभाव है। यह मस्तिष्क को अशांत कर देता है और व्यक्ति को अपनी पूर्ण योग्यता में कार्य नहीं करने देता। इसकी विनाशकारी प्रवृत्ति से जीवन में सामंजस्य की कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। लेकिन इसके कुछ सकारात्मक पक्ष भी हैं। यह ऊर्जा का शक्तिशाली स्रोत है। क्रोधी व्यक्ति अपने प्रति किए गए सभी प्रकार के अन्याय का विरोध करते हैं। वे शोषण, भ्रष्टाचार और सामाजिक बुराईयों का प्रतिकार करते हैं।

क्रोध को कैसे नियंत्रित करें?

क्रोध आधारभूत मनोभाव है इसलिए इसकी उपस्थिति अवश्यंभावी है, लेकिन निश्चित रूप से इस मनोभाव को पर्याप्त ढंग से करने के तरीके हैं —

- बच्चों को आत्मनियंत्रण विकसित करने की शिक्षा दी जानी चाहिए।
- क्रोध को प्रोत्साहित करने वाले प्रेरकों को पर्यावरण से समाप्त कर देना चाहिए।
- माता-पिता व शिक्षकों को बच्चों के प्रति सहानुभूतिशील और समझदार होने की आवश्यकता है और उन्हें बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा करने की स्थिति में होना चाहिए।
- खेल में भावशांति की क्षमता होती है। इसलिए खेल बच्चों में क्रोध को नियंत्रित करने में अत्यधिक प्रभावशाली है।
- बच्चों को तनाव से और निरंतर कार्य से दूर रखना चाहिए।
- छोटे बच्चों को आदेश नहीं देना चाहिए।
- बच्चे का आत्मसम्मान बनाए रखने के लिए उसकी प्रशंसा करें।

ईर्ष्या

ईर्ष्या एक सर्वव्यापी मनोभाव है। यह क्रोध की ही अपवृद्धि होती है। सामान्यतः यह विश्वास किया जाता है कि इस विशेष मनोभाव को 2 वर्ष की आयु में भी अनुभव किया जाता है। ईर्ष्या, रोष का दृष्टिकोण है जो दूसरों के प्रति होता है। ईर्ष्या को सामाजिक स्थितियाँ जन्म देती हैं, जैसे — जब माता-पिता किसी अन्य में अधिक रुचि लेते हैं और उस पर अधिक ध्यान देते हैं, तो बच्चे को ईर्ष्या होती है। ईर्ष्या के कई कारण

हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, अच्छे कपड़े, परीक्षा या खेल में उपलब्धियाँ, उच्च सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति, खिलौने, शिक्षक द्वारा कक्षा में अधिक ध्यान देना दूसरों में ईर्ष्या पैदा कर सकती है। ईर्ष्या उग्र रूप में अत्यधिक विनाशकारी होती है एवं ईर्ष्या बच्चों को बालसुलभ व्यवहार की ओर ले जा सकती है। वे अवनति के चिह्न प्रकट कर सकते हैं, जैसे — अँगूठा चूसना, बिस्तर पर पेशाब करना आदि। कभी-कभी उनमें ईर्ष्या दूसरे बच्चों से झगड़ने, चिढ़ाने, डराने-धमकाने में दिखाई पड़ती है या अवांछनीय टिप्पणियाँ करने में प्रकट होती है।

ईर्ष्या को कैसे नियंत्रित करें?

- घर एवं विद्यालय का वातावरण अनुकूल और सहायक होना चाहिए। माता-पिता एवं शिक्षक का उन बच्चों के प्रति अत्यधिक सहानुभूतिपूर्वक दृष्टिकोण रखना चाहिए, जिन्हें समंजन की कठिनाई होती है जिससे कि वे कभी असुरक्षित या अपेक्षित महसूस न करें।
- बच्चों को अनुचित प्रेम या स्नेह नहीं देना चाहिए। माता-पिता एवं शिक्षकों को बच्चों के प्रति व्यवहार में और शिक्षा में निष्पक्ष दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए।
- बच्चों को बहुत आरंभ से ही हार या असफलता को गरिमा के साथ स्वीकार करने के लिए शिक्षित किया जाना चाहिए। असफलता पर काबू पाने के लिए उनको नवीन ऊर्जा के संचयन के लिए उत्साहित भी किया जाना चाहिए।

आक्रामकता

आक्रामकता को सामान्यतः उस व्यवहार के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसका प्रयोजन दूसरों को शारीरिक, मानसिक या व्यक्तिगत कष्ट पहुँचाने या

संपत्ति को नष्ट करना होता है। इसका उद्देश्य मूलतः दूसरों को कष्ट पहुँचाना है। मूल रूप से आक्रामकता दो प्रकार की होती है। एक, शत्रुतापूर्ण आक्रामकता होती है जो दूसरे को चोट पहुँचाने के एकमात्र उद्देश्य से की जाती है। दूसरी, सहायक आक्रामकता होती है जिसका उद्देश्य पीड़ितों को पीड़ा न होकर लाभ प्राप्त करना होता है। लेकिन शत्रुतापूर्ण और सहायक आक्रामकताओं की प्रतिक्रियाएँ सुस्पष्ट नहीं होतीं। बच्चों में आक्रामक प्रतिक्रियाएँ शारीरिक या शाब्दिक हो सकती हैं या नरम या उग्र हो सकती हैं। बच्चे प्रायः क्रोध का हिंसक प्रस्फोट प्रहार करके, काटकर, लात जमा के, धूँसा मार के, धक्का मारकर या खींचतान करके प्रकट करते हैं। आक्रामकता सीखी हुई प्रतिक्रिया हो सकती है यह प्रेक्षण के द्वारा या नकल उतारकर सीखी जा सकती है। बच्चे बहुत ही कम आयु में अपनी माँग मनवाने के लिए आक्रामकता का व्यवहार सीख जाते हैं और सच्चाई यह है कि जितनी अधिक बार यह प्रबलित होता है, उतनी ही अधिक बार यह प्रदर्शित किया जा सकता है।

भावात्मक विकास के लिए विद्यालय और घर में क्या-क्या कर सकते हैं?

- शिक्षक और माता-पिता बच्चों से बातचीत करें
- बच्चों के लिए खिलौने बनाएँ व खेलें
- प्यार का व्यवहार करें
- बाहर घूमने ले जाएँ व आस-पड़ोस की जानकारी दें
- माता-पिता को समझाएँ कि बच्चों को भरपूर प्यार दें
- विद्यालय में ऐसा माहौल बनाएँ कि बच्चे दूसरे बच्चों से हिलमिल कर रहें
- बच्चों की क्षमता के अनुसार क्रियाएँ कराएँ

- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को भरपूर प्यार दें तथा उन्हें उनकी ज़रूरत के अनुसार चीज़ें उपलब्ध करवाएँ। उन्हें आभास दिलाएँ कि वे भी अपना कार्य स्वयं कर सकते हैं। माता-पिता को समझाएँ कि वे इन बच्चों को स्वीकार करें और उन्हें घर की गतिविधियों में शामिल करें
- बच्चों को व्यस्त रखें
- उन्हें स्वयं करके सीखने के अवसर दें
- बच्चों के साथ सभी त्योहार हँसी-खुशी मनाएँ
- बच्चों को अपनी भावनाओं को व्यक्त करने का

अवसर दें। उनकी बातें ध्यान से सुनें और बीच में टोका-टाकी न करें। उन्हें डाँटे नहीं।

बच्चों में भावात्मक विकास हो इसके लिए विद्यालय में सुविधाएँ होनी चाहिए, जैसे — शिक्षिका बच्चे को मिट्टी के खेल, कहानी का अभिनय करना, लय व ताल पर नाचना, गुड़िया का खेल जैसे काल्पनिक खेल, मूक अभिनय, फूल-पत्ती, टहनी आदि से मनपसंद आकृति बनाना, चॉक से स्लेट या फ़र्श पर आकृति बनाना जैसी गतिविधियाँ करवा सकती हैं।

संदर्भ

वर्मा, प्रीति 1979. *बाल विकास*. दोआबा बुक हाउस. नयी सड़क, दिल्ली.

शर्मा, उषा 2017. *पूर्व बाल्यावस्था देखभाल व शिक्षा*. दोआबा बुक हाउस. नयी सड़क, दिल्ली.

———. 2017. *बाल विकास के आयाम*. दोआबा बुक हाउस. नयी सड़क, दिल्ली.

बाल केंद्रित शिक्षा तथा प्रगतिशील शिक्षा

सुनेना मित्तल*

बच्चे के मनोविज्ञान को समझते हुए शिक्षण अधिगम की व्यवस्था करना तथा उसकी अधिगम संबंधी कठिनाइयों को दूर करना बाल केंद्रित शिक्षण कहलाता है। बाल केंद्रित शिक्षा के अंतर्गत बच्चे की रुचियों, प्रवृत्तियों तथा क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा प्रदान की जाती है। जब हम बच्चों को बाल केंद्रित शिक्षा प्रदान करते हैं, तो शिक्षण अधिगम रुचिकर हो जाता है। इसी विषय पर आधारित है प्रस्तुत लेख।

शिक्षा बच्चे की मूल प्रवृत्तियों, प्रेरणाओं और संवेगों पर आधारित होनी चाहिए, ताकि उनकी शिक्षा को दिशा दी जा सके। बच्चों की शारीरिक व मानसिक योग्यताओं का अध्ययन करके फिर उनकी विकास में मदद करनी चाहिए। जैसे यदि कोई बच्चा मानसिक या शारीरिक रूप से कमजोर है या आपराधिक गतिविधियों से जुड़ा है तो पहले उसकी उस कमी को दूर किया जाना चाहिए। कुछ शिक्षक मनोवैज्ञानिक ज्ञान के अभाव में बच्चे मार-पीट कर ठीक करने की कोशिश करते हैं, परंतु इस तरह का व्यवहार स्थिति को और खराब कर देता है।

एन.सी.एफ़. 2005 के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य बच्चों के स्कूली जीवन को उसके घर, आस-पड़ोस के जीवन से जोड़ना है। इसके लिए बच्चों को स्कूल में अपने बाल अनुभवों के बारे में बात करने का मौका देना चाहिए। उसे सुना जाना चाहिए, ताकि बच्चे को

लगे कि शिक्षक उसकी बात को सुन रहा है। हर बच्चे में अपनी क्षमताएँ और कौशल होते हैं, जिन्हें स्कूल में व्यक्त करने का मौका देना चाहिए, जैसे — संगीत, कला, नाट्य, चित्रकला, नृत्य एवं प्रकृति के प्रति अनुराग इत्यादि।

प्राचीन काल में शिक्षा का जो स्वरूप था और वर्तमान में शिक्षा का जो स्वरूप हम देखते हैं, उन दोनों में बहुत अंतर है। जॉन ड्यूवी के अनुसार शिक्षा व्यक्ति की उन सभी योग्यताओं का विकास है जिनके द्वारा वह अपने वातावरण पर नियंत्रण करने की क्षमता प्राप्त करता है और अपनी संभावनाओं को पूर्ण करता है। खेल-खेल में बच्चों की रुचियों, प्रवृत्तियों तथा क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा प्रदान करना और बच्चों की अधिगम क्षमता को बढ़ाना, उनकी अधिगम संबंधी कठिनाइयों को दूर करना बाल केंद्रित शिक्षण है। बाल केंद्रित शिक्षा में बच्चे

* नर्सरी अध्यापिका, आई.आई.टी., नर्सरी विद्यालय, नयी दिल्ली 110 016

के लिए विषयवस्तु सरल हो जाती है तथा शिक्षक बच्चों को प्रधान मनाते हैं, जिसकी वजह से शिक्षा का महत्व बढ़ जाता है। बाल केंद्रित शिक्षा में बच्चों को व्यावहारिक और सामाजिक शिक्षा दी जाती है। शिक्षा मनुष्य के व्यवहार में परिवर्तन लाती है। यह बच्चे के व्यवहार में ऐसे परिवर्तन लाती है, जो बालक के जीवन में उचित होते हैं। अगर हम प्राचीनकाल की शिक्षा प्रणाली की बात करें तो बच्चे के दिमाग में ज्ञान की सामग्री को ठूस देना ही शिक्षा होती थी। लेकिन वर्तमान समय में बच्चे के सर्वांगीण विकास पर बल दिया जाता है। बच्चे के सर्वांगीण विकास में उसका शारीरिक विकास सामाजिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास आदि सभी पक्ष शामिल होते हैं।

आधुनिक शिक्षा पद्धति बाल केंद्रित है। आज यदि हम निजी विद्यालय की बात करें तो पाते हैं कि बच्चों के अनुसार शिक्षकों को नियुक्त किया जाता है। अर्थात् जो अध्यापक बच्चों को उचित पद्धतियों का प्रयोग करके शिक्षण कराते हैं बच्चे उन्हें अध्यापकों को पसंद करते हैं। इस व्यवस्था में प्रत्येक बच्चे की ओर अलग से ध्यान दिया जाता है व्यावहारिक मनोविज्ञान में व्यक्तियों की परस्पर विभिन्नताओं पर प्रकाश डाला जाता है, जिससे यह संकेत मिला है कि शिक्षक हर एक विद्यार्थी की विशेषताओं पर ध्यान दें व उनके लिए प्रबंध करें।

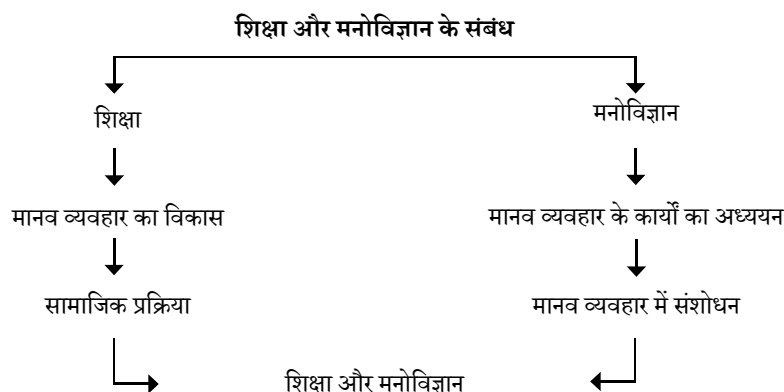
आज के अध्यापक को केवल शिक्षा व शिक्षा पद्धति के बारे में ही नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के बारे में भी जानना होता है क्योंकि आधुनिक शिक्षा विषय प्रधान या अध्यापक प्रधान न होकर बाल प्रधान

अथवा बाल केंद्रित है। यहाँ यह महत्व का विषय है कि बालक के व्यक्तित्व का कहाँ तक विकास हुआ है? इसलिए हमें शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान होना अतिआवश्यक होता है। शिक्षा क्षेत्र शिक्षक को यह बताता है कि बच्चों को क्या पढ़ना है। परंतु समस्या यह है कि उन्हें पढ़ाना कैसे है? इस समस्या को सुलझाने में बाल मनोविज्ञान शिक्षक की सहायता करता है। बाल विज्ञान सीखने की प्रक्रिया, विधियों, महत्वपूर्ण कारकों, अच्छी या बुरी दशाओं आदि तत्वों से परिचित करवाता है। इसके ज्ञान से बच्चों को सीखने में सहायता प्राप्त होती है।

बाल केंद्रित शिक्षा में बच्चों के प्रयोग एवं अनुसंधान की ओर आकर्षित करने के लिए मनोविज्ञान का सहारा लिया जाता है। नई-नई परिस्थितियों में नई-नई समस्याओं को सुलझाने के लिए शिक्षक को अलग-अलग प्रयोग करने चाहिए। उससे निकलने वाले निष्कर्षों का उपयोग करना चाहिए। छात्रों को क्रियाशील रखने के लिए छात्र के हाथ, पैर और मस्तिष्क सब क्रियाशील होने चाहिए अर्थात् वह एक से अधिक ज्ञानेंद्रियों का प्रयोग बच्चे के अधिगम को और अधिक प्रभावी बना देता है। नैतिक कहानियों व नाटकों आदि के द्वारा बच्चे अच्छी तरह से सीखते हैं। महापुरुषों व वैज्ञानिकों के उदाहरण उनके लिए सदा प्रेरणादायी होते हैं। छात्र की रुचि उसे कार्य करने में प्रेरणा देती है। अतः शिक्षण बच्चे की रुचि के अनुसार दिया जाना चाहिए। अध्यापक को बच्चे की योग्यता अनुसार विषयवस्तु का चयन करना चाहिए। प्रत्येक बच्चे का बौद्धिक स्तर (Intelligence Quotient) अलग होता है। शिक्षक

को बच्चों की विभिन्नताओं को ध्यान में रखना चाहिए। शिक्षक को सभी छात्रों को समान समझना चाहिए। सभी छात्रों से समान प्रश्न पूछने चाहिए और उनमें कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए।

शिक्षा एक ऐसा हथियार है जो सभी के लिए आवश्यक है। शिक्षा वह है, जो मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ उसके हृदय एवं आत्मा का विकास करती है। शिक्षा के उद्देश्यों को लेकर



किसी भी क्षेत्र में अध्यापकों की सफल होने के लिए बात मनोविज्ञान का ज्ञान अवश्य होना चाहिए। इसके अभाव में न तो बच्चों की विशेषताओं को ही समझा जा सकता है और न ही उनकी समस्याओं का समाधान किया जा सकेगा। बच्चे के संबंध में शिक्षक को बच्चों के व्यवहार के मूल आधार आवश्यकताओं मानसिक स्तर, रुचियों योग्यताओं वह व्यक्तित्व इत्यादि का व्यापक ज्ञान अवश्य होना चाहिए। विद्यालय में किसी भी कक्षा का कार्यक्रम वैयक्तिक भिन्नताओं, प्रेरणाओं, मूल्यों व सीखने के सिद्धांतों के मनोविज्ञान के ज्ञान के आधार पर बनाया जाना चाहिए। शिक्षण के पश्चात् बच्चों का मूल्यांकन व परीक्षण भी अत्यंत आवश्यक होता है। मूल्यांकन से यह पता लगाया जा सकता है कि विद्यार्थी ने कितना अधिगम किया है।

कहा जाता है कि शिक्षा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन के लिए सबसे जरूरी हथियार है। किसी भी राष्ट्र के विकास में शिक्षा एक बुनियादी तत्व है। शिक्षा के माध्यम से बढ़ती जनसंख्या, गरीबी, सांप्रदायिकता, लिंगभेद जैसी समस्याओं से निपटा जा सकता है। शिक्षा का महत्वपूर्ण भाग होता है 'प्राथमिक शिक्षा' क्योंकि प्राथमिक शिक्षा ही आगे की शिक्षा के लिए एक मजबूत आधार बन जाती है। सामान्य तौर पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अर्थ ऐसी शिक्षा से लगाया जाता है जो बच्चे को रटने से दूर ले जाती हो तथा केवल जानकारी आधारित न हो, बल्कि अवधारणाओं की समझ पर हो। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का प्रचलित शब्दावली के अनुसार अर्थ ऐसी शिक्षा है जो 'शिक्षक व पुस्तक केंद्रित' के स्थान पर 'बाल केंद्रित' शिक्षा हो तथा

बच्चे के ज्ञान, मूल्यों, कौशलों और क्षमताओं का विकास करती हो।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार के अनुच्छेद 45 के जरिये 1951 में यह वायदा किया था कि राज्य इस संविधान के लागू होने की तारीख से दस साल के भीतर 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रयास करेगा। लेकिन कानून के रूप में इसको अमलीजामा पहनाने में छह दशक से ज्यादा समय लग गया। आखिरकार विभिन्न कमीशनों और समितियों की सिफारिशों के बाद यह कानून 2004 में भारतीय संविधान के 86 वें संशोधन के तहत सामने आया और 1 अप्रैल 2010 को लागू किया गया। इसके बाद से शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाया गया और राज्यों को ज़िम्मेदारी दी गई कि प्रत्येक बच्चे को प्राथमिक शिक्षा देना सुनिश्चित किया जाए। मार्च 2013 तक देश के महज आठ फीसदी स्कूलों में यह कानून पूर्ण रूप से लागू किया जा सका है।

प्रगतिशील शिक्षा

प्रगतिशील शिक्षा की अवधारणा के अनुसार शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य बच्चे की शक्तियों का विकास है। वैयक्तिक शिक्षा के अनुरूप शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भी अंतर रखकर इस उद्देश्य को पूरा किया जा सकता है। प्रगतिशील शिक्षा यह बताती है कि शिक्षा बच्चे के लिए है, बच्चे शिक्षा के लिए नहीं, इसलिए शिक्षा का उद्देश्य ऐसा वातावरण तैयार करना होना चाहिए जिसमें प्रत्येक बच्चे के सामाजिक विकास को पर्याप्त अवसर मिले। प्रगतिशील शिक्षा का उद्देश्य जनतंत्रीय मूल्यों का विकास किया जाना है। शिक्षा

के द्वारा हम ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते हैं जिसमें व्यक्ति-व्यक्ति में कोई भेद न हो, सभी पूर्ण स्वतंत्रता और सहयोग से काम करें। प्रत्येक मनुष्य को अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों, इच्छाओं और आकांक्षाओं के अनुसार विकसित होने के अवसर मिलें, सभी को समान अधिकार दिए जाएँ। ऐसा समाज तभी बन सकता है, जब व्यक्ति और समाज के हित में कोई मौलिक अंतर न माना जाए। शिक्षा के द्वारा मनुष्य में परस्पर सहयोग और सामंजस्य की भावना स्थापित करना होता है। प्रगतिशील शिक्षा में शिक्षण अधिगम विधि को अधिक व्यावहारिक करने पर जोर दिया जाता है। इसमें बच्चे के स्वयं करके सीखने की प्रक्रिया पर जोर दिया जाता है। केवल शिक्षण से ही शिक्षक का कार्य पूरा नहीं होता, उसे बच्चों के ज्ञान और विकास का मूल्यांकन और परीक्षण करना होता है। मूल्यांकन करने से विद्यार्थी की उन्नति का पता चलता है और उसी अनुसार बच्चों में सुधार किए जाते हैं। भारतीय शिक्षा पद्धति में मूल्यांकन शब्द परीक्षा व तनाव से जुड़ा हुआ है। मूल्यांकन के तनाव से विद्यार्थी को दूर रखने के लिए बाल केंद्रित शिक्षा प्रणाली में सतत एवं व्यापक मूल्यांकन पर जोर दिया जाता है। मूल्यांकन एक बार के कार्यक्रम के बजाय एक निरंतर प्रक्रिया है, जिसे संपूर्ण अध्यापन अधिगम प्रक्रिया में निर्मित किया गया है। शिक्षा शास्त्र का शिक्षक के लिए विशेष महत्व होता है। क्योंकि एक अध्यापक को शिक्षा शास्त्र ही यह बतलाता है कि बच्चों को क्या पढ़ाया जाए?

वैसे सबसे बड़ी समस्या यह होती है कि विद्यार्थियों को कैसे पढ़ाया जाए। बाल मनोविज्ञान

द्वारा ही अध्यापक को उपयोगी शिक्षण अधिगम विधि आ सकती है। उसे पता चलता है कि किस प्रकार के बच्चे को किस विधि से पढ़ाया जाए। बच्चों को भयमुक्त रखने और उन्हें मानसिक रूप से स्वरूप रखने की कवायद में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षक के आचरण में सख्ती की जगह मैत्रीपूर्ण व्यवहार, कड़े अनुशासन की जगह लचीली व्यवस्था, पिटाई की जगह अपनत्व बच्चों को चिंता से उन्मुक्त रखने से परिणाम यह होगा कि समाज में शिक्षक की आज की भूमिका भी बदल जाएगी। भविष्य में समुदाय और समाज शिक्षक को बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा और निगरानी का महत्वपूर्ण हिस्सा मानने लगेगा। यह हर शिक्षक के लिए गौरव की बात होगी। बच्चों को सजा न देने और उन्हें भयभीत न करने को लेकर शिक्षकों और शिक्षण संस्थानों में वर्तमान में जो संशय हैं, वह भी धीरे-धीरे दूर होता चला जाएगा। दुनिया तेजी से बदल रही है। शिक्षक को भी आ रहे इस बदलाव के चलते अपनी शिक्षण पद्धति में आवश्यकानुसार सुधार करने होंगे।

प्रगतिशील शिक्षा के योगदान में मस्तिष्क एवं बुद्धि की अहम भूमिका है। इनके माध्यम से वह दैनिक जीवन की समस्याओं को सुलझाने का काम करता है। जैसे-जैसे वह अपने दैनिक जीवन में अपनी मानसिक शक्तियों का प्रयोग करता है वैसे-वैसे वह मानसिक विकास भी करता है। मस्तिष्क ही वह मुख्य उपकरण है जो समस्याओं को सुलझाने में सहायक होता है। अतः बालक के संबंध में शिक्षक को उसके व्यवहार के मूल आधारों आवश्यकताओं, मानसिक स्तर, रुचियों, योग्यताओं, व्यक्तित्व इत्यादि का विस्तृत ज्ञान होना

चाहिए। शिक्षा, बच्चे की मूल प्रवृत्तियों प्रेरणाओं और संवेगों पर आधारित होनी चाहिए। प्रगतिशील शिक्षा में शिक्षक को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसके अनुसार शिक्षक समाज का सेवक है, उसे विद्यालय में ऐसा वातावरण बनाना पड़ता है जिसमें पलकर बच्चे के सामाजिक व्यक्तित्व का विकास हो सके। विद्यालय में स्वतंत्रता और समानता के मूल्यों को बनाए रखने के लिए शिक्षक को कभी भी बच्चों से बड़ा नहीं समझना चाहिए। आज्ञा और उपदेशों के द्वारा अपने विचारों और प्रवृत्तियों को बच्चों पर लादने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

निष्कर्ष

भारत में जो शिक्षा पद्धति प्रचलित है उसके कई पक्षों में सुधार की आवश्यकता है। हमारी शिक्षा व्यवस्था पर एक वृहत जनसमूह को शिक्षित करने का उत्तरदायित्व है। साधन और संसाधन बहुत सीमित हैं। परिस्थितियाँ भी अनुकूल नहीं हैं, फिर भी हम लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर प्रयत्नशील हैं। फिर भी हम दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़े तो इस निराशाजनक स्थिति से उभर सकते हैं।

सबके लिए शिक्षा की सुविधा करवानी है कि प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति से यह अपेक्षा की जानी चाहिए कि वह इस लक्ष्य प्राप्ति में सहयोग प्रदान करें। *ईच वन टीच वन* (Each one, Teach one) का नारा इस दिशा में सफलता दिला सकता है। शिक्षा में तकनीकी का उपयोग अत्यधिक हो रहा है, किंतु इन तकनीकों साधनों को शिक्षक का विकल्प न मानकर सहयोगी मानकर प्रयोग करने का लक्ष्य है।

संदर्भ

- वर्मा, रिकू कुमार. 2013. 'बाल केंद्रित शिक्षा एवं प्रगतिशील शिक्षा'. *बाल विकास एवं शिक्षा शास्त्र*. अरिहंत पब्लिकेशन लिमिटेड. नयी दिल्ली.
- सरोहा, सुशील. 2012. 'चाइल्ड सैटंड एंड प्रोग्रेसिव एजुकेशन'. *एजुकेशनल साइकोलॉजी*. सरोहा पब्लिकेशन, रोहिणी, नयी दिल्ली.
- . 2016. 'बाल केंद्रित शिक्षा एवं प्रगतिशील शिक्षा'. *बाल विकास एवं शिक्षा शास्त्र*. सरोहा पब्लिकेशन, रोहिणी, नयी दिल्ली.

प्राथमिक बाल शिक्षा के लक्ष्य तथा क्रियाकलाप

पद्मा यादव*

प्रारंभिक बाल शिक्षा आज के युग में सामान्य रूप से न केवल बच्चों के संपूर्ण विकास का अहम निवेश है, बल्कि प्रारंभिक शिक्षा को सार्वजनीकरण रूप में राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने में भी महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। प्रारंभिक बाल शिक्षा सुविधाओं में गुणात्मक विस्तार के लिए सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा समन्वित प्रयास किया जा रहे हैं, जिससे देश के करोड़ों बच्चों को इसका लाभ मिल सके। इस विस्तार के चलते काफ़ी संख्या में प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता है। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए सेवारत शिक्षक-प्रशिक्षकों को अल्पकालीन प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है। ज्यादातर लोगों को यह जानकारी नहीं होती कि पूर्व प्राथमिक स्तर पर क्या कराया जाए या कैसी गतिविधियाँ या क्रियाएँ करायी जाएँ, जिससे बच्चों को आनंददायक वातावरण मिले। वे पूर्व-प्राथमिक स्तर को प्राथमिक स्तर का *डाउनवर्ड एक्सटेंशन* मान कर बच्चों को पढ़ाते हैं और टीचर ट्रेनिंग भी देते हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर प्रस्तुत लेख में 3-4 एवं 4-5 साल के बच्चों के लिए आयोजित की जाने वाली क्रियाओं के उद्देश्य एवं क्रियाएँ साझा की गई हैं जो शिक्षक प्रशिक्षकों एवं शिक्षकों के लिए उपयोगी हो सकती हैं। ये क्रियाएँ एक लैबोरेटरी स्कूल में कार्य अनुभव और उपस्थित ग्रन्थों के आधार पर सुझाई गयी हैं।

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य बच्चों का सर्वांगीण विकास करना है। पूर्व-प्राथमिक शिक्षा द्वारा बच्चों का शारीरिक विकास होता है और बच्चों को पढ़ने-लिखने एवं गणित की तैयारी में मदद मिलती है। यह बच्चों को औपचारिक शिक्षा के लिए तैयार करती है इसके साथ ही बच्चों में कई अन्य सृजनात्मक क्षमताओं को भी विकसित करती है। तीन से छः वर्ष की आयु के बीच के बच्चे पूर्व प्राथमिक शालाओं में

पूर्व प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करते हैं। ये शालाएँ बच्चों को प्रेरणादायक खेल वातावरण प्रदान करने के साथ ही बच्चों का बौद्धिक, भाषागत, सामाजिक, संवेगात्मक तथा शारीरिक विकास करने में सहायक हैं।

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है बच्चों का सर्वांगीण विकास करना। अतः बच्चों को अग्रलिखित

*प्रोफ़ेसर, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली 110 016

संबंधों की उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए गतिविधियाँ कराई जानी चाहिए —

- सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास
- शारीरिक विकास एवं माँसपेशियों का विकास
- भाषा विकास
- संज्ञानात्मक विकास
- सृजनात्मक एवं सौंदर्यबोध का विकास

3-4 आयु वर्ग और 4-5 आयु वर्ग के बच्चों के लिए सामान्यतः एक जैसी गतिविधियाँ होती हैं। बस 4-5 आयु वर्ग की गतिविधियों का स्तर 3-4 आयु वर्ग की गतिविधियों की अपेक्षा थोड़ा अधिक होता है। लेख में इन्हीं दोनों आयु वर्ग के लिए गतिविधियाँ सुझाई गयी हैं।

3-4 आयु वर्ग के लिए गतिविधि लक्ष्य

सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास

बच्चों के सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास के अंतर्गत अनेक बातें शामिल हैं, जो अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए, सुरक्षा एवं भरोसे की भावना का विकास करना, प्रारंभिक बाल शिक्षा केंद्र के वातावरण तथा दिनचर्या से परिचय कराना, अच्छी आदतों का निर्माण करना, जैसे — शौचालय का उचित प्रयोग, हाथ धोना, व्यक्तिगत स्वच्छता, भोजन की उचित आदतें, शिक्षिका/कार्यकर्ता का अभिवादन करना, अपनी बारी की प्रतीक्षा करना, दूसरे बच्चों के साथ खेलना सीखना इत्यादि, अपने व्यवहार को नियंत्रित करने की योग्यता का विकास करना, अपने बारे में अच्छी भावना विकसित करना, सामूहिक क्रियाओं के प्रति रुचि का विकास करना, सामाजिक रूप से स्वीकृत तरीकों के अनुसार अपने

व्यवहारों तथा संवेगों को नियंत्रित करने की योग्यता का विकास करना आदि।

शारीरिक विकास एवं माँसपेशियों का विकास

बच्चों के शारीरिक एवं माँसपेशियों के विकास के लिए यह ज़रूरी है कि हम बच्चों को साथ में काम करने के अनेक अवसर उपलब्ध कराएँ। साथ ही शिक्षक को कुछ और बातों का ध्यान रखना होगा उदाहरण के लिए, उचित वृद्धि और विकास पर नज़र बनाये रखना, स्थूल माँसपेशियों और सूक्ष्म माँसपेशियों में संतुलन बनाने में मदद करना, छोटी माँसपेशियों को विकसित करने के अवसर प्रदान करना, आँख-हाथ में तालमेल, हाथ-मुँह में तालमेल इत्यादि।

भाषा विकास

भाषा मनुष्य के भावों और विचारों को व्यक्त करने का एक माध्यम है। भाषा सीखने का स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक क्रम होता है — सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना। बच्चे में भाषा सीखने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। भाषा का विकास मूलतः जीवन की प्रारंभिक अवस्था से ही आरंभ हो जाता है जो मूलतः अनुकरण एवं अभ्यास द्वारा अर्जित की जाती है। भाषा विकास के लक्ष्य हैं — सुनने के कौशल का विकास करना, जिसमें शामिल है ध्वनि विभेदीकरण, सुनने का विस्तार, सुनकर समझना; मौखिक अभिव्यक्ति का विकास करना, शब्द भंडार का विकास, अभिव्यक्ति में स्पष्टता एवं प्रवाह, पूर्ण वाक्यों का प्रयोग, आवश्यकताओं एवं विचारों का संप्रेषण इत्यादि।

संज्ञानात्मक विकास

वस्तुओं का मिलान करके तथा पहचान करके उनके अंतर को पहचानने की क्षमता का विकास करना

जैसे — एक समय में दिखायी गयी 3—4 वस्तुओं का निरीक्षण करके तुरंत पुनः स्मरण करने की क्षमता का विकास, किसी परिचित वस्तु का चित्र देखकर उसके गायब भाग की पहचान करने की क्षमता का विकास करना, किसी एक आयाम या सम्बोध के आधार पर जैसे आकार या रंग वर्गीकरण करने की क्षमता का विकास करना, तीन-चार वस्तुओं से बने नमूने को फिर से बनाने की क्षमता का विकास करना, सरल स्तर पर संपूर्ण तथा उसके भागों के सहसंबंध को समझने की क्षमता का विकास करना, सरल समस्याओं को सुलझाने के लिए सही ढंग से सोचने की क्षमता का विकास करना, लाल, नीला, पीला, हरा, सफ़ेद और काला रंग पहचानने, नाम बताने तथा मिलान करने की क्षमता का विकास, निम्नलिखित को पहचानने तथा मिलान करने की क्षमता पर विकास — गोल, चौकोर, तिकोन, गोला बनाने की क्षमता का विकास, छोड़ा-बड़ा, लंबा-छोटा, भारी हल्का, लंबा-नाटा, मोटा/घना/पतला, चौड़ा-संकरा, दूर-नजदीक को पहचानने, नाम बताने तथा मिलान करने की क्षमता का विकास करना, स्थितियों को पहचानने की क्षमता का विकास करना, जैसे — अंदर-बाहर, ऊपर-नीचे, आगे-पीछे; दैनिक क्रियाओं के संदर्भ में निम्नलिखित सम्बोधों की चेतना का विकास करना, जैसे — दिन-रात, दोपहर-संध्या, घंटों का ज्ञान, ठंडा और गरम में भेद करने पहचानने और जानने की क्षमता का विकास इत्यादि। कुछ प्रस्तावित/सम्बोध/प्रोजेक्ट, जैसे— स्वयं, परिवार, पालतू तथा जंगली जानवर, घर, मौसमी सब्जियाँ तथा फल, पौधे, सुरक्षा संबंधी आदतें, पर्व त्यौहार, हवा, पानी इत्यादि।

सृजनात्मक एवं सौंदर्यबोध का विकास

बच्चों में सृजनात्मकता एवं सौंदर्यबोध का विकास करने के लिए कुछ बातों पर ध्यान देना ज़रूरी है, जैसे — कला के माध्यम से सृजनात्मक अभिव्यक्ति का विकास करना, शारीरिक अंगों का कलात्मक ढंग से संचालन करना, पर्यावरण में उपलब्ध रंगों तथा सौंदर्य के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना इत्यादि।

4-5 आयु वर्ग हेतु गतिविधि लक्ष्य

सामाजिक-संवेगात्मक विकास

सामाजिक-संवेगात्मक विकास बच्चों के व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण आयाम है। इसमें अनेक बातें शामिल हैं, जैसे — प्रारंभिक बाल कार्यकर्ता/शिक्षिका (यदि नई हों) तथा कक्षा के अन्य बच्चों से परिचय होना, अच्छी आदतों का निर्माण करना, जैसे— व्यक्तिगत तथा पर्यावरणीय स्वच्छता, प्रारंभिक बाल शिक्षिका/कार्यकर्ता का अभिवादन, अपनी बारी की प्रतीक्षा करना, किसी वस्तु को मिल बाँटकर उपयोग एवं सहयोग करना, नियमित उपस्थिति, अपने बारे में अच्छी भावना का विकास करना, सामूहिक क्रियाओं के प्रति रुचि का विकास करना, सामाजिक रूप से स्वीकृत तरीकों को अपने व्यवहारों तथा संवेगों को नियंत्रित करने की योग्यता का विकास करना, निर्णय लेने की योग्यता का विकास करना इत्यादि।

शारीरिक विकास एवं माँसपेशियों का विकास

बच्चों में उचित वृद्धि बनाये रखने के लिए नियमित जाँच, स्थूल माँसपेशियों में संतुलन, सूक्ष्म माँसपेशियों में संतुलन, बच्चों की छोटी माँसपेशियों का विकास, आँख-हाथ में तालमेल, हाथ-मुँह में तालमेल इत्यादि पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

भाषा विकास

भाषा विकास में शामिल है— सुनने के कौशल का विकास करना— ध्वनि विभेदीकरण, सुनने का विस्तार, सुनकर समझना, आलोचनात्मक दृष्टिकोण के साथ सुनना; मौखिक अभिव्यक्ति का विकास करना— शब्द भंडार का विकास, अभिव्यक्ति में स्पष्टता और प्रवाह, क्रमबद्ध ढंग से बात करना; सृजनात्मक अभिव्यक्ति; पढ़ने की तैयारी करवाना, देखी गयी वस्तुओं का विभेदीकरण, सुनी गयी ध्वनियों का विभेदीकरण (शब्दों की प्रथम एवं अंतिम ध्वनि), दृश्य ध्वनि सह संबंध, बाएँ से दाएँ का दिशाबोध; लिखने की तैयारी करना इत्यादि।

संज्ञानात्मक विकास

पाँचों इन्द्रियों का प्रयोग करके वस्तुओं का नाम बताना तथा 3 स्तरों पर क्रमीकरण करने की क्षमता का विकास करना, जैसे— मीठा, उससे मीठा, सबसे मीठा, बड़ा, उससे बड़ा, सबसे बड़ा आदि। एक समय में दिखायी गई 6–7 वस्तुओं का निरीक्षण करने तथा तुरंत पुनः स्मरण करने की क्षमता का विकास, किसी परिचित वस्तु के अधिक सूक्ष्म या गायब भाग की पहचान करने की क्षमता का विकास, दो सम्बोधों या आयामों के आधार पर जैसे रंग एवं आकार, वर्गीकरण करने की क्षमता का विकास, वस्तुओं, चित्रों, कहानियों तथा घटनाओं को पुनः प्रस्तुत करने तथा उसी तर्क से क्रम में बढ़ाने का विकास, संपूर्ण तथा भाग के सह संबंध को अपेक्षाकृत कुछ जटिल स्तर पर समझने की क्षमता का विकास, अपेक्षाकृत कुछ जटिल समस्याओं को सुलझाने के लिए सही ढंग से सोचने की क्षमता का विकास।

लाल, पीला, नीला, काला, सफ़ेद के साथ अन्य रंगों जैसे भूरा, नारंगी, बैंगनी की पहचान और नाम बताना, तीन स्तरों पर प्रमुख रंगों का क्रमीकरण करने की क्षमता का विकास (यह समझने की क्षमता कि रंगों को मिलाने से नये रंग तैयार हो जाते हैं।) निम्नलिखित आकारों के नाम बताने की क्षमता तथा पर्यावरण में उपलब्ध उन्हीं आकार की वस्तुओं से मिलान-मिलाना— गोल, चौकोर, तिकोन, अन्य आकारों, जैसे— तारा, छड़ी, आयत, मेहराब (आधा गोला) आदि को पहचानने की क्षमता विकसित करना।

अंक संबंधी सम्बोधों का तीन स्तरों तक क्रमीकरण करने की क्षमता का विकास करना। निम्नलिखित की क्षमता का विकास— एक से एक का संबंध, पाँच तक की संख्या का संबोध, पाँच तक के अंकों की पहचान, पाँच तक के अंकों को गिनना तथा उन्हें क्रम में रखना, निम्नलिखित स्थितियों की पहचान तथा उनके लिए उपयुक्त शब्दों का प्रयोग, जैसे— सबसे ऊपर-सबसे नीचे, अंदर-बाहर, पहले-बाद में, ऊपर-नीचे, अगला-पिछला, यहाँ-वहाँ, किनारे-बीच में, बगल में-पीछे-सामने; निम्नलिखित सम्बोधों की चेतना का विकास— समय से, समय से पहले, देर से; दिनचर्या के संदर्भ में, पहले-बाद में, घड़ी से समय का मापन, सप्ताह के दिन; तापमान की तुलनात्मक स्थितियों जैसे गर्म, उससे गर्म, सबसे गर्म को पहचानने, विभेदीकरण करने तथा जानने की क्षमता का विकास। कुछ और सम्बोध/ प्रोजेक्ट, जैसे— बरसात, मौसम, कीड़े-मकोड़े, समाज के मददगार, संसार, यातायात इत्यादि।

सृजनात्मक एवं सौंदर्यबोध का विकास

कला के माध्यम से सृजनात्मक अभिव्यक्ति का विकास करना, शारीरिक अंगों का कलात्मक ढंग से संचालन, सृजनात्मक चिंतन का विकास करना, पर्यावरण में उपलब्ध सौंदर्य एवं रंगों के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना।

3-4 एवं 4-5 आयु वर्ग के बच्चों के लिए खेल क्रियाएँ

ऊपर दिये गए लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए शिक्षक एवं शिक्षक प्रशिक्षकों द्वारा निम्न क्रियाएँ/गतिविधियाँ कराई जा सकती हैं।

सामाजिक – संवेगात्मक विकास

शिक्षक बच्चों को खेल के माध्यम से संवेगों पर नियंत्रण करना सिखा सकते हैं। सामाजिक-संवेगात्मक विकास में सहायक गतिविधियाँ हैं— अनौपचारिक वार्तालाप, गीत तथा कविताएँ, अभिनय करना, कठपुतली का खेल, स्वतंत्र एवं निर्देशित खेल, सामूहिक क्रियाएँ एवं खेल, भोजन/नाश्ते के समय की क्रियाएँ, त्योहार एवं जन्मदिन मनाना, आत्मनिर्भरता के भाव को जगाने वाली क्रियाएँ अर्थात् किसी क्रिया में नेतृत्व करना, बच्चों को दायित्व बाँटना आदि। वार्तालाप, विकलांग बच्चों का समूह में शामिल करना, प्रकृति में विचरण, बागवानी-पलतू जानवरों की देखभाल करना।

शारीरिक विकास एवं माँसपेशियों का विकास

बच्चों में शारीरिक विकास एवं माँसपेशियों के विकास के लिए सहायक गतिविधियाँ हैं— लंबाई और वजन की मासिक जाँच, पूरक पोषण देना, समय-समय पर होने वाली मासिक जाँच, बच्चों

और समाज को स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी जानकारी देना, स्वतंत्र एवं निर्देशित खेल, दौड़ने, उछलने, कूदने, चढ़ने, फेंकने, संतुलन रखने, लुढ़कने आदि वाली क्रियाएँ, चित्रकला एवं रंजनकला, फाड़ना, काटना, चिपकाना, धागा डालना, सिलाई करना, बालू और पानी के खेल, मिट्टी का काम, जिन वस्तुओं को इच्छानुसार तोड़ा-मरोड़ा जा सके, उनके साथ मनचाहे ढंग से खेल, उँगलियों को नचाते हुए गीत गाना, हाथ और चम्मच से भोजन करना इत्यादि।

भाषा विकास

भाषा विकास के लिए बच्चों के साथ स्वतंत्र एवं निर्देशित वार्तालाप करें, सुनने एवं शब्दों के खेल खेलें जैसे— तुकान्त शब्दों के खेल, लययुक्त छंद और गीत, ध्वनियों की पहचान आदि। अन्य गतिविधियाँ जैसे— पहेलियाँ, अभिनय, कहानी सुनाना और बनाना, कठपुतली का खेल, दृश्य विभेदीकरण संबंधी खेल एवं क्रियाएँ, शब्दों की ध्वनियों का विभेदीकरण तथा शब्द-निर्माण के खेल, सचित्र पुस्तकों को सही ढंग से पकड़ना, चित्र एवं शब्द का मिलान, सूक्ष्म माँसपेशियों की समस्त क्रियाएँ, खींची गई आकृति में रंग भरना, बिंदुओं को जोड़ना, आकृतियों की बनावट की नकल करना (पेंसिल तथा केयॉन से) इत्यादि भाषा विकास में बहुत सहायक हैं।

संज्ञानात्मक विकास

मूल संज्ञानात्मक कौशलों और प्रक्रियाओं के विकास हेतु गतिविधियाँ करवाएँ, जैसे— इंद्रियों का विकास— देखने की इंद्रिय, सुनने की इंद्रिय, स्पर्श से अनुभव करने की इंद्रिय, सूँघने की इंद्रिय, स्वाद की इंद्रिय, स्मृति एवं निरीक्षण क्षमता का विकास,

वर्गीकरण करने की क्षमता का विकास, क्रमिक चिंतन का विकास, समस्या समाधान तथा विवेक का विकास।

प्रमुख संबोधों का विकास जैसे — रंग के संबोध का निर्माण, आकारों के संबोध का निर्माण, अंक पूर्व संबोध का निर्माण, अंक संबोधों का निर्माण, स्थान के संबोध का निर्माण, समय के संबोध का विकास, तापमान के संबोध का विकास, निम्नलिखित के संबंध में पर्यावरणीय तापमान के संबोध का विकास, प्राकृतिक पर्यावरण, भौतिक पर्यावरण, सामाजिक पर्यावरण प्रोजेक्ट/ थीम के रूप में चर्चा की जा सकती है।

दृष्टि संबंधी तथा ध्वनि विभेदीकरण संबंधी खेल क्रियाएँ, पर्यावरण में उपलब्ध विभिन्न बनावट की वस्तुओं को छूकर तथा पहचानने वाले कार्डों के साथ क्रियाएँ, विभिन्न स्वाद वाली वस्तुओं के साथ क्रियाएँ, स्मृति खेल, 'क्या गायब है', निरीक्षण तथा निरीक्षित वस्तु के पुनः स्मरण पर आधारित क्रियाएँ, वस्तुओं, चित्र कार्डों का प्रयोग करके वर्गीकरण क्रियाएँ। वर्गीकरण के खेल, दिया गया नमूना फिर से बनाना, कहानियों और घटनाओं का सही क्रम में पुनः स्मरण, क्रमिक चिंतन पर आधारित खेल, पहेली एवं भूल भुलैया का हल निकालना, समस्याओं को सुलझाने से संबंधित क्रियाकलाप जैसे दो या उससे अधिक वस्तुओं के सहसंबंध पर

आधारित कार्ड, सरल प्रश्नों के उत्तर देना, वार्तालाप, गीत और तुकबंदियाँ, अभिनय, वस्तुओं, कपड़ों, पर क्रियाकलाप, निर्देशित खेल, रचनात्मक क्रियाएँ, प्रकृति में भ्रमण, रंगों के संबंध के लिए वर्णित क्रियाएँ, वार्तालाप एवं कहानियाँ, पानी के खेल, बालू के खेल, क्रमीकरण कार्ड, गुटकों के खेल, निर्देशित खेल एवं क्रीड़ा, अभिनय, अभिनय पर आधारित खेल जैसे दुकान-दुकान, वस्तुओं के साथ और बाद में संख्या कार्ड्स के साथ निर्देशित खेल, अंकों के गीत, अंकों के खेल, अंकों की पहेली, समय संबोध के कार्ड्स, दफ़्ती आदि पर बनायी गयी घड़ियाँ, दैनिक क्रियाओं का क्रम से पुनः स्मरण करने संबंधित क्रियाएँ, सरल प्रयोग जैसे — बनाये गये थर्मामीटर, वार्तालाप, पहले वर्णित विभिन्न क्रियाओं का प्रोजेक्ट के विषयों से एकीकरण, कक्षा में प्रदर्शन, भ्रमण एवं प्रकृति दर्शन, त्योहारों को मनाना तथा उनसे संबंधित वस्तुएँ तैयार करना, हवा, पानी तथा पौधे, उगाने से संबंधित सरल प्रयोग, बालू तथा पानी के खेल इत्यादि।

सृजनात्मक एवं सौंदर्यबोध का विकास

कुछ क्रियाकलाप जैसे — सृजनात्मक चित्रकला, लयात्मक गतिशीलता तथा नाटक आदि जैसी क्रियाएँ — बहुउत्तरीय प्रश्न, 'आओ बनें' वाले खेल, गीत एवं कहानियाँ बनाना, प्रकृति के भ्रमण, कक्षा प्रदर्शन आदि।

संदर्भ

एन.सी.ई.आर.टी., 2000. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

— 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

कौल, विनीता. 1996. *प्रारंभिक बाल शिक्षा कार्यक्रम*. पूर्व प्राथमिक एवं प्रारंभिक शिक्षा विभाग. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

- गुप्त, मंजीत सेन. 2013. प्रारंभिक बाल्यावस्था— देख-भाल और शिक्षा. पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड. दिल्ली.
- भारत सरकार. 1986. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986. मानव संसाधन विकास मंत्रालय. नयी दिल्ली.
- . 2011. निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम – 2009. मानव संसाधन विकास मंत्रालय. नयी दिल्ली.
- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय. 2013. राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) नीति 2013, नयी दिल्ली.
- मुरलीधरन, राजलक्ष्मी और शोबिता अस्थाना, 1991. शिशुओं के लिए प्रेरक गतिविधियाँ. विद्यालय पूर्व एवं प्रारंभिक शिक्षा विद्यालय. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- यादव, पद्मा. 2015. एग्जम्पलर गाइडलाइंस फ़ॉर इम्प्लिमेंटेशन ऑफ़ अर्ली चाइल्डहुड केयर एंड एजुकेशन (ई.सी.सी.ई.) करीकुलम. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

शिक्षक की जवाबदेही से शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता में सुधार

एम. एम. रॉय*

शिक्षक समाज की सर्वाधिक संवेदनशील इकाई है। हमारे देश में शिक्षक का बहुत सम्मान किया जाता है। शिक्षक बच्चों में छुपी हुई प्रतिभा को खोजता है और उनका पोषण भी करता है। यह महसूस किया जा रहा है कि समाज में सामाजिक मूल्यों का लगातार हास हो रहा है। शिक्षक की गुणवत्ता पर भी प्रश्न चिह्न लग रहे हैं। शिक्षकों की जवाबदेही की माँग उठने लगी है। यदि हम शिक्षकों को अपने व्यवसाय के प्रति जिम्मेदार और जवाबदेह बनाना चाहते हैं तो शिक्षा व्यवस्था में ऐसा वातावरण बनाना होगा जहाँ वे उत्तरदायित्व स्वयं लेना पसंद करें। लेकिन शिक्षकों की जवाबदेही सुदृढ़ और सुनिश्चित करने से पहले उनके लिए एक वातावरण तैयार किया जाना चाहिए जिसका उल्लेख इस लेख में किया गया है।

भारत सरकार प्रतिवर्ष शिक्षा पर काफ़ी व्यय करती है, काफ़ी नये विद्यालय खुल रहे हैं और विद्यालयों में बच्चों के नामांकन में वृद्धि हो रही है। इसके साथ ही शिक्षक प्रशिक्षण पर भी बल दिया जा रहा है। परंतु फिर भी शिक्षा की गुणवत्ता में कोई खास सुधार नहीं हो रहा है। यह एक विचारणीय प्रश्न है और इसे अनदेखा नहीं किया जा सकता है। शिक्षा की गुणवत्ता को गंभीरता से लेते हुए यूनेस्को की जी.ई.एम. की रिपोर्ट ने भी वर्ष 2017-18 का शीर्षक शिक्षा में जवाबदेही रखा था। हमारी शिक्षा प्रणाली की यह जिम्मेदारी होनी चाहिए कि वह प्रत्येक चरण में शिक्षा प्रणाली से जुड़े लोगों की जवाबदेही सुनिश्चित करे।

शिक्षक समाज की सर्वाधिक संवेदनशील इकाई है और कहा जाता है कि शिक्षण व्यवसाय समाज के सभी व्यवसायों की जननी है। विभिन्न वेतन आयोगों ने प्रत्येक बार शिक्षक के कार्यों के लिए वेतनमान को उन्नत बनाये रखने की सिफ़ारिशें की हैं, ताकि शिक्षक पूर्ण मनोयोग से अपने शिक्षण कार्य को समर्पित हो सकें और अपनी जवाबदेही सुनिश्चित करें। पिछले तीन दशकों में गठित हुई सभी समितियों और आयोगों ने अपना यह सुझाव दिया है कि शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए यह आवश्यक है कि नियमित रूप से शिक्षक के कार्यों का मूल्यांकन किया जाए और उसकी जवाबदेही सुनिश्चित की जाए।

* वरिष्ठ प्रवक्ता, डाइट, घुमनहेड़ा, एस.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

एक शिक्षक का कार्य समाज में वर्षों से सम्मानजनक रूप से देखा जाता रहा है। शिक्षकों के लिए ईमानदार, ज्ञानी आदि जैसे विशेषणों का भी प्रयोग किया जाता है। एक शिक्षक का कार्य बहुआयामी है। वह अपने बच्चों में छुपी हुई प्रतिभा को खोजता है और उनका पोषण भी करता है। एक शिक्षक बच्चों के लिए मार्गदर्शक, दार्शनिक और मित्र होने के साथ समाज और राष्ट्र निर्माता भी हैं। हम सभी लोग यह भी महसूस कर रहे हैं कि समाज में से सामाजिक मूल्यों का लगातार हास हो रहा है और क्योंकि शिक्षा सामाजिक प्रणाली का अभिन्न अंग है शिक्षा के स्तर के द्वारा यह भली भाँति जाना जा सकता है कि समाज में जीवन के मूल्यों का क्या स्तर है?

कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षा का स्तर एक सूचक के रूप में यह दिखाता है कि समाज में जीवन की गुणवत्ता क्या है? शिक्षक, शिक्षा की एक धुरी है इसीलिए शिक्षक-शिक्षा की गुणवत्ता कसौटी पर है तथा शिक्षक-शिक्षकों के योगदान पर भी प्रश्नचिह्न लग रहे हैं। शिक्षक के पास बहुआयामी कार्य होते हैं जिसमें वह बच्चों, विद्यालय, बच्चों के माता-पिता, समाज तथा राष्ट्र की सेवा करते हैं। जब वे कोई ऐसा उत्तरदायित्व सँभालते हैं तो उनकी जवाबदेही तय होनी चाहिए क्योंकि इसमें उनको अपने कार्य के संबंध में दूसरे व्यक्ति के प्रश्नों का जवाब देना बनता है।

यह जवाबदेही नैतिक जवाबदेही बनती है जब आंतरिक इच्छा शक्ति द्वारा व्यक्ति हमेशा कुछ अच्छा करने के लिए अभिप्रेरित रहता है। वहीं दूसरी जवाबदेही में व्यक्ति अपने संस्था के प्रति

उत्तरदायी रहता है क्योंकि जो कार्य उस व्यक्ति को दिया जाता है उसको उसे बस पूरा करना होता है। क्या हमें सिर्फ़ कार्य को करना ही है या उस कार्य का प्रदर्शन भी बहुत अच्छा करना है? क्या आपने कभी अनुभव किया है कि जो शिक्षक अपने व्यवसाय से संतुष्ट हैं वे नए-नए उत्तरदायित्व लेना पसंद करते हैं और क्या वे सफलता की भी सीढ़ियाँ चढ़ते हैं? एक व्यक्ति जब अपने कार्य के प्रति समर्पित रहता है, तो यह समझा जाता है कि वह अपने कार्य से संतुष्ट है। दूसरे शब्दों में कहें तो यदि शिक्षक अपने व्यवसाय में पूरी तरह से समर्पित है तो उसकी जवाबदेही भी सुदृढ़ होगी। यदि हमें शिक्षकों को उनके व्यवसाय के प्रति जिम्मेदार और जवाबदेह बनाना है तो शिक्षा व्यवस्था में ऐसे वातावरण बनाना होगा, जहाँ वे उत्तरदायित्व लेना पसंद करें। शिक्षकों की जवाबदेही सुदृढ़ बनाने के लिए निम्नलिखित वातावरण तैयार किया जा सकता है।

शिक्षकों को निर्णय लेने की अनुमति

शिक्षक के पास निर्णय करने की शक्ति होनी चाहिए कि वे क्या पढ़ाएँ और बच्चों के सीखने का मूल्यांकन किस प्रकार करें या बच्चों को कैसे समझें? यह शिक्षक ही होता है जो बच्चों द्वारा महसूस किए जाने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषायी अवरोधों की परेशानियों को सीधे-सीधे महसूस करता है। शिक्षा में गुणवत्ता का लक्ष्य तब तक नहीं प्राप्त किया जा सकता जब तक कि हमारे पास ऐसे शिक्षक न हों जिनकी निष्ठा संदेहों से परे हो जिनमें हम पूरी तरह से विश्वास कर सकें।

सतत एवं व्यापक मूल्यांकन से जवाबदेही

विद्यालय में भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि वाले बच्चे पढ़ने आते हैं। विविध पृष्ठभूमि से आए बच्चों का अपना अनुभव होता है और यह बच्चे अपनी गति से सीखते हैं। विविध पृष्ठभूमियों और विभिन्न क्षमताओं वाले बच्चों को पढ़ाना एक चुनौती है। एक अच्छी मूल्यांकन और परीक्षा पद्धति सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन सकती है। जिसमें बच्चे और शिक्षा तंत्र दोनों को ही विवेचानात्मक और आलोचनात्मक प्रतिपुष्टि से फ़ायदा हो सकता है। मूल्यांकन ऐसा हो जो यह सुनिश्चित करे कि बच्चे सफलतापूर्वक पढ़ें और बढ़ें तथा अपने पूर्ण रूप में निखरे; विविध क्षेत्रों में उत्कृष्टता को मान्यता मिलनी चाहिए तथा उसका सम्मान होना चाहिए। मूल्यांकन में इस बात पर ज़ोर होना चाहिए कि जो पढ़ाया गया है उसके प्रति बच्चा कितना जवाबदेह रहा है न कि उसके याद करने की क्षमता का। उसकी जवाबदेही में कई बातें शामिल होंगी जैसे कि उसे जो पढ़ाया गया है उसका अपने जीवनानुभव तथा दूसरी तमाम चीज़ों से संबंध जोड़ने की योग्यता, सीखी गयी चीज़ों के बारे में नए और आश्चर्यजनक तरीके से सवाल बनाने की क्षमता आदि। बच्चों के उपलब्धि स्तर के साथ-साथ बच्चे की अभिरुचि, उसके स्वतंत्र रूप से सीखने की क्षमता का मूल्यांकन होना चाहिए। अतः यह समझना ज़रूरी है कि मूल्यांकन की प्रक्रिया को बदलकर बच्चे के सीखने के अनुभवों पर आधारित और गुणवत्ता को आधार बनाकर मूल्यांकन किया जाए। यदि शिक्षक ऐसे मूल्यांकन को सुनिश्चित कर सकें कि विविधता अपने पूर्ण रूप में निखरे और मूल्यांकन में इस बात

पर ज़ोर दिया गया कि जो पढ़ाया गया है उसके प्रति बच्चा कितना जवाबदेह रहा है तो अवश्य इसमें शिक्षक की भी जवाबदेही बनती है।

शिक्षण पेशे में हो रहे क्षय का सामना

शिक्षक वह धुरी है जिसके इर्द-गिर्द शिक्षा व्यवस्था घूमती है। वर्तमान संदर्भ में तेज़ी से बढ़ रही स्कूली व्यवस्था और वित्तीय घाटे वाली स्थिति में, समुचित संख्या में शिक्षकों की अनुपलब्धता एक नए तरह के शिक्षकों के आगमन की ओर बढ़ती है। स्कूली शिक्षक की सामाजिक स्थिति में तेज़ी से गिरावट आ रही है तथा शिक्षक को सरकारी स्कूल के तमाम कुप्रशासन और बीमारियों के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जाता है। जबकि इसको पहचाना भी जा रहा है कि शिक्षक का उत्तरदायित्व काफ़ी महत्वपूर्ण है।

अपर्याप्त शिक्षक

बच्चों और शिक्षकों का अनुपात कई क्षेत्रों में अपेक्षित मानक से काफ़ी नीचे है और अधिकांश शहरी क्षेत्रों के स्कूलों में शिक्षकों की बहुलता है। एक शिक्षक वाले 96 प्रतिशत स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित हैं। इसका मतलब यह है कि शिक्षकों के पास बच्चों को स्कूलों में रखने और उन्हें सिखाने के लिए जो आवश्यक है उसके लिए न तो समय और न ही ऊर्जा।

गैर-शैक्षिक काम

स्कूली शिक्षकों के पास पढ़ाने के अलावा कई और तरह के काम होते हैं, जैसे — ग्रामीण विकास योजनाओं के लिए आँकड़ों को एकत्र करना, राष्ट्रीय जनगणना, चुनाव के काम और अन्य प्रचार कार्य इनसे वे कक्षा से दूर होते जाते हैं।

शिक्षकों को निर्माण और सृजन की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिले

सरकार और समाज में ऐसी परिस्थितियाँ बननी चाहिए, जिनसे शिक्षकों को निर्माण और सृजन की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिले। शिक्षकों को इस बात की आज्ञा दी होनी चाहिए कि वे नए प्रयोग कर सकें और संप्रेषण की उपयुक्त विधियाँ और अपने समुदाय की समस्याओं और क्षमताओं के अनुरूप नए उपाय निकाल सकें।

प्रशासनिक व्यवस्था में समानता

शिक्षकों को भर्ती करने की प्रणाली में इस प्रकार परिवर्तन किया जाए कि उनका चयन उनकी योग्यता के आधार पर व्यक्ति निरपेक्ष रूप से और उनके कार्य की अपेक्षाओं के अनुरूप हो। शिक्षकों का वेतन और सेवा की शर्तें उनके सामाजिक और व्यावसायिक दायित्व के अनुरूप हों और ऐसी हों जिनसे प्रतिभाशाली व्यक्ति शिक्षण व्यवसाय की ओर आकृष्ट हों। यह प्रयत्न किया जाए कि पूरे देश में वेतन में, सेवा/शर्तों में और शिकायतें दूर करने की व्यवस्था में समानता का वाँछनीय उद्देश्य प्राप्त किया जा सके। शिक्षकों की तैनाती और तबादले में व्यक्ति-निरपेक्षता लाने के लिए निर्देशक सिद्धांत बनाए जाए। उनके मूल्यांकन की एक पद्धति तय की जाए जो स्पष्ट हो, आँकड़ों एवं तथ्यों पर आधारित हो और जिसमें सबका योगदान हो। जवाबदेही के मानक तय किए जाए। अच्छे कार्य को प्रोत्साहित किया जाए और निष्क्रियता को निरुत्साहित। उच्च ग्रेड में तरक्की के लिए शिक्षकों को उचित अवसर

दिए जाए और शिक्षकों की जवाबदेही तय करने के लिए मौजूदा वरिष्ठता आधारित संरचना को प्रदर्शन आधारित संरचना में बदला जाए।

शिक्षकों की जवाबदेही को सुनिश्चित बनाना कोई आसान काम नहीं है, क्योंकि शिक्षकों के प्रदर्शन को मापना कठिन है। उससे प्राप्त होने वाले 'परिणामों' का कोई निर्धारित मानक नहीं है, हालाँकि स्कूलों में पढ़ाई के दौरान किए जाने वाले निरीक्षणों तथा बच्चों के परीक्षा परिणामों आदि से अध्यापन स्तरों के अच्छे या निम्न होने के कुछ संकेत अवश्य मिल सकते हैं।

निष्कर्ष

शिक्षा समाज की प्रगति और बौद्धिक विकास का आवश्यक अंग है। किसी भी देश की शिक्षा व्यवस्था उस देश के राष्ट्रीय हितों और लक्ष्यों की पूर्ति में सहायक होती है। राष्ट्र और समाज की उन्नति के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि उसकी भावी पीढ़ी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो सके। यदि शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति जिम्मेदार और जवाबदेह होता है तो हम अपनी भावी पीढ़ी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दे सकते हैं। लेकिन शिक्षकों की जवाबदेही सुदृढ़ बनाने के लिए एक वातावरण तैयार करना होगा जैसे— शिक्षकों को निर्णय लेने की अनुमति, शिक्षकों को निर्माण और सृजन की ओर बढ़ने की प्रेरणा देना, गैर-शैक्षिक काम नहीं कराना, शिक्षकों की कमी को दूर करना, प्रशासनिक व्यवस्था में समानता लाना, शिक्षण पेशे में हो रहे क्षय को रोकना, तथा बच्चों के सतत एवं व्यापक मूल्यांकन से शिक्षकों की जवाबदेही पक्का करना आदि।

संदर्भ

- एन.सी.ई.आर.टी. 1991. उभरते भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2002. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2005. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2007. 'परीक्षा प्रणाली में सुधार', राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2007. 'शिक्षा के लक्ष्य एवं पाठ्यचर्या बदलाव के लिए व्यवस्थागत सुधार'. राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- एन.सी.टी.ई. 2009. राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा पाठ्यचर्या रूपरेखा. एन.सी.टी.ई., नयी दिल्ली.

सोशल मीडिया शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति का नवीन उपकरण

चित्रा सिंह*

शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति की जब बात की जाती है तो उसे केवल पदोन्नति से जोड़ दिया जाता है। यह भुला दिया जाता है कि शिक्षक केवल एक पद ही नहीं है, बल्कि एक सामाजिक उत्तरदायित्व है और उसे केवल पदोन्नति से ही नहीं जोड़ा जा सकता। यह केवल एक पेशा ही नहीं मिशन भी है। पर यह धारणा इतनी दृढ़ हो गयी है कि शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति के लिए नीति-निर्धारण सरकारी विद्यालयों के स्तर पर सरकार करती है और निजी विद्यालयों के स्तर पर विद्यालय प्रबंधन। शिक्षक की इस नीति-निर्धारण में कोई भूमिका भी हो सकती है इस पर गौर भी नहीं किया जाता। परिणामस्वरूप शिक्षक पदोन्नत होते-होते प्रशासक तो बन जाता है पर इस प्रक्रिया में शिक्षक कहीं खो जाता है। सिर्फ सरकार और प्रबंधन ही नहीं स्वयं शिक्षक भी इस धारणा से अछूता नहीं है और वह भी इस बँधी-बँधई प्रक्रिया में ढल जाता है। प्रस्तुत आलेख में शिक्षक की इस नीति-निर्माण में कैसी भूमिका होनी चाहिए और आज की संचार तकनीकी कैसे उसकी इस भूमिका के सफल क्रियान्वयन में उपयोगी हो सकती है, इस पर विचार प्रस्तुत किये गये हैं और एक शिक्षक की शिक्षक के रूप में ही व्यवसायिक प्रगति कैसे संभव हो सकती है इस बारे में सुझाव दिये गये हैं।

शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति के लिए सरकार और विद्यालय प्रबंधन ने एक तयशुदा ढाँचा बना रखा है। इसमें कार्यशालाओं, सेमिनारों, विषय विशेषज्ञों के व्याख्यानों और प्रशिक्षणों पर जोर दिया जाता है। ये कार्यशालाएँ एक सीमा तक उपयोगी तो होती हैं और इनमें भाग लेकर शिक्षक कुछ हद तक लाभान्वित भी होता है, लेकिन ज्यादा बड़ा लाभ उसे शैक्षिक स्तर पर नहीं, प्रशासनिक स्तर पर मिलता है। यह लाभ

पदोन्नति या पे-स्केल में वृद्धि के रूप में होता है। इस प्रक्रिया का अवलोकन करने पर आप यह अनुभव कर सकते हैं कि शिक्षक को भी एक छात्र बना दिया गया है और यह कार्यशालाएँ आदि उसकी परीक्षाएँ हैं। इन्हीं से उसे गुजर कर अपने व्यवसाय की अगली सीढ़ी तक पहुँचना है, जैसा कि एक छात्र भी करता है। यह सही है कि सीखने की प्रक्रिया जीवन में अनवरत चलती है और सभी इससे गुजरते हैं। लेकिन यह सीखना स्वयं

* सह प्राध्यापक, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल

के प्रयासों से ज्यादा अच्छी तरह किया जा सकता है। शिक्षक भी यदि स्वयं इस प्रक्रिया को निर्धारित करें, इसका नियामक बनें तो यह प्रक्रिया अधिक कारगर हो सकती है। इसके लिए शिक्षकों को स्वयं आगे आना होगा। आपस में एक-दूसरे के साथ काम करना होगा। यह ध्यान भी रखना होगा कि सामूहिक होने की यह प्रक्रिया प्रशासनिक लाभों के लिए न हो, जैसाकि प्रायः होता है। एक शिक्षक के रूप में अपने विषय पर और अपने विद्यार्थियों पर उसकी पकड़ और प्रभावी हो इसके लिए हो। समूहीकरण की यह प्रक्रिया संचार युग में बहुत आसान हो गयी है और शिक्षकों को इस सुविधा का लाभ लेना होगा। सोशल मीडिया में अपने दैनंदिनी जीवन में तो वे क्रियाशील होते ही हैं, यही क्रियाशीलता व्यवसायगत भी हो सकती है इस पर भी शिक्षकों को ध्यान देकर आगे आना होगा। तकनीक तो उद्देश्य निरपेक्ष होती है। यह एक हथियार नहीं उपकरण है जिसे कुशलता से उपयोग करने वाला एक नयी दुनिया का निर्माण कर सकता है और शिक्षक तो स्वाभाविक निर्माता है, वह छात्र का भविष्य निर्माण करता है और प्रकारान्तर से देश का भी।

एक शिक्षक को यह सबसे पहले समझना होगा कि इस आदर्श को वह व्यवहार के धरातल तक उतारें। एक शिक्षक ही यह कर सकता है। बस उसे इसके लिए पारंपरिक और बँधी-बँधाई रीत से हटकर आधुनिक और आज के संदर्भ में सोचना होगा।

शिक्षक संगठन — व्यावसायिक प्रगति के लिए

शिक्षकों का संगठन आपसी सहयोग से व्यावसायिक प्रगति के लिए हो, प्रशासनिक नहीं शैक्षिक हो,

अधिकारों के प्रति संघर्ष के लिए ही नहीं। देशभर में शिक्षकों के अनेक संगठन हैं और वे ज़रूरी भी हैं, लेकिन वे एक-आयामी हैं। देशभर में फैले दूसरे सभी संगठनों की तरह वे भी अपने अधिकारों की बात ही ज्यादा करते हैं और इसे ही व्यावसायिक प्रगति से जोड़ते हैं। यह व्यावसायिक प्रगति शिक्षक के व्यवसाय का एक आयाम हो सकती है। लेकिन व्यावसायिक प्रगति का मूल अर्थ शिक्षक की अपने विषय के प्रति जागरूकता, उसके बारे में निरंतर अध्ययन, उसमें नवाचार और शिक्षण में इस प्रकार प्राप्त नवीनतम जानकारीयों, उपलब्धियों और अपने विषय के नये आयामों को छात्रों तक पहुँचाना भी है। अभी हमारी शिक्षा व्यवस्था का जो ढाँचा है उसमें निर्धारित पाठ्यक्रम को तय समय में पूरा कराकर शिक्षक के कर्तव्य की पूर्ति हो जाती है और उसके कार्य का मूल्यांकन उसके विषय में कितने प्रतिशत छात्र सफल रहे इसके द्वारा कर लिया जाता है। यहाँ कितने प्रतिशत विद्यार्थी कितने प्रतिशत अंकों में सफल हुए यही मापदंड शिक्षक की शिक्षक के रूप में सफलता का सूचक है। जोर सफल रहने पर है, सीखने-सिखाने पर नहीं है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि शिक्षक और प्रशासन/प्रबंधन के बीच काम का बँटवारा हो गया है। एक ओर शिक्षक संगठन जहाँ अपने अधिकारों के लिए एकजुट रहते हैं। वहीं दूसरी ओर प्रशासन/प्रबंधन उनकी तयशुदा व्यावसायिक प्रगति के चरणों की पूर्ति के लिए विभिन्न तरह की कार्यशालाओं, सेमिनारों, विषय विशेषज्ञों के व्याख्यानों और प्रशिक्षणों की व्यवस्था और उस पर अमल के लिए सक्रिय रहता है।

शिक्षक द्वारा, शिक्षक की और शिक्षक के लिए, जैसी व्यवस्था अभी भी पूर्णतः विकसित नहीं हो पायी है जो किसी भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था का आधार होती है। जैसे, जनता प्रजातंत्र में स्वयं तय करती है कि उसे कैसा नेतृत्व और नीति चाहिए और उस नेतृत्व को क्या करना चाहिए वैसा ही शिक्षक को भी करने का अधिकार और अवसर देना चाहिए।

शिक्षा के बारे में शिक्षक को ही तय करने का अधिकार होना चाहिए और उसकी बात को ही अंतिम माना जाना चाहिए।

शिक्षक नीति-निर्माता के रूप में

गांधी जी इस बारे में विचार करने वाले सबसे पहले व्यक्ति थे। उनका मानना था कि शिक्षा कैसी होनी चाहिए, उसका स्वरूप कैसा होगा और कैसे वो दी जायेगी ये शिक्षाविद्, सरकार तथा विद्वत्जन तय नहीं करेंगे, बल्कि शिक्षक और उनके साथ छात्र वर्ग इस प्रक्रिया में योगदान करने वाला एक मात्र समूह होगा। शिक्षक को नीति-निर्माता के रूप में आगे आना होगा। उसे अपनी व्यावसायिक प्रगति के लिए प्रशिक्षण, कार्यशालाओं, शिक्षण सामग्री, पाठ्यक्रम निर्धारण आदि में सीधे और एकमात्र हस्तक्षेप करने को तैयार रहना होगा। जबकि शिक्षक की प्रगति शिक्षक के द्वारा ही निर्धारित होगी तो उसके पालन की बेहतर स्थितियाँ बनेंगी और परिणाम बेहतर होंगे।

शिक्षक एक समूह के रूप में अपनी आवश्यकताओं जैसे — प्रशिक्षण की जरूरत, प्राप्त प्रशिक्षण का विश्लेषण, शिक्षा और शिक्षण पर सलाह देकर इस प्रकार की गतिविधियों को ज्यादा कारगर बना सकता है। अपना लक्ष्य पूर्ण कर सकता है, उन्हें प्रासंगिक

बना सकता है और अपने सीमित समय का बेहतर उपयोग कर सकता है।

इसके लिए शिक्षक को प्रशिक्षण की जिम्मेदारी स्वयं लेनी होगी और प्रशासन एवं प्रबंधन को उसे यह देनी होगी। सेमिनार, प्रशिक्षण, व्याख्यान, टेकमीट और इन सबका बाद में अनुसरण, इससे प्राप्त जानकारीयों का कक्षाओं में उपयोग, विषय विशेष के समूहों का निर्माण ताकि जानकारीयों का आदान-प्रदान कर कक्षा में उन्हें अपनाया जा सके, आदि इसके अंग हैं।

जब शिक्षक यह तय करेगा तो वह यह भी ध्यान रख पाएगा कि इससे उसका शिक्षण प्रभावित न हो, क्योंकि विद्यालय की समय सीमा का ध्यान भी रखा जाना जरूरी है।

शिक्षक — अच्छा शिक्षण और सीखने के नये आयाम

अच्छा शिक्षण और सीखना कैसा होना चाहिए इन बातों पर एक शिक्षक ज्यादा अच्छे से गौर कर सकता है। मूलभूत जीवन मूल्यों को दैनिक जीवन से कैसे जोड़ा जा सकता है, वह इस पर बेहतर काम कर सकता है। अतः शिक्षक की व्यवस्थागत प्रगति को शिक्षण की प्रैक्टिस से भी जोड़ना होगा। इसके लिए उसे दिया जा रहा प्रशिक्षण अकादमिक पाठ पर नहीं कक्षा में पढ़ाये जा रहे पाठ पर होना चाहिए। इस प्रक्रिया का अवलोकन स्वयं शिक्षक द्वारा ही हो। यह शिक्षक के स्वयं के विद्यालय में या दूसरे विद्यालय में किया जा सकता है। इसलिए उन्हें ऐसी कार्यशालाएँ दी जानी चाहिए, जिसमें उन विषयगत पाठों पर चर्चा हो जो वे पढ़ा रहे हों। इसके निर्धारण में शिक्षक ही महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

इसके अलावा स्वाध्याय भी शिक्षक को मज़बूत बनाता है और इसके अनेक माध्यम आज उपलब्ध हैं। संचार तकनीक और सोशल मीडिया उसमें महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

सोशल मीडिया — शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति का एक उपकरण

हमारी शती की संचार-क्रांति ने हमें जो सुविधाएँ उपलब्ध करायी हैं और हमारे जीवन में जो बदलाव आया है उसकी सबसे मज़बूत अभिव्यक्ति सोशल मीडिया के रूप में हुई है। फ़ेसबुक, ट्विटर और व्हाट्सएप, मैसेन्जर आदि कई माध्यम और प्लेटफ़ॉर्म आज हमें उपलब्ध हैं। इन्होंने हमें आपस में संवाद करने, जोड़े रखने और अभिव्यक्त करने में इतना सहयोग किया है कि एक पूरी दुनिया हमारी मुट्ठी में सिमट आयी है। जैसा कि कहा जाता है हर चीज़ अब सिर्फ़ एक क्लिक पर उपलब्ध है। सामाजिक जुड़ाव का सशक्त माध्यम होने के कारण इसे सोशल मीडिया नाम दिया गया है जो सार्थक है। बस इसकी सार्थकता इसके सकारात्मक उपयोग में है।

हममें से कोई भी इन माध्यमों के उपयोग से अछूता नहीं है। शिक्षक भी नहीं होगा और होना भी नहीं चाहिए। आवश्यकता बस इस बात की है कि वो इस माध्यम को अपनी व्यावसायिक प्रगति के लिए एक उपकरण की तरह काम में लें हथियार की तरह नहीं और मनोरंजन या समय गुज़ारने के साधन के रूप में भी नहीं।

सोशल मीडिया के इस प्लेटफ़ॉर्म को स्टाफ़रूम की तरह काम में लिया जा सकता है। बस उसकी नकारात्मकता हावी न हो जाये इसका ध्यान रखना

होगा। यह स्वस्थ बहस का मंच बने। वाद-विवाद का नहीं।

शिक्षक को नेटवर्किंग भी करनी चाहिए जिससे समान विचारधारा के दूसरे शिक्षक उससे जुड़ें। इस नेटवर्किंग में केवल शिक्षक ही शामिल न हो, बल्कि शिक्षा में और उसकी प्रगति में रुचि रखने वाले छात्रों के अभिभावक एवं छात्र भी शामिल हों। इसका कारण यह है कि शिक्षण एक ऐसा व्यवसाय है जिसके बारे में प्रायः हर व्यक्ति यह राय रखता है कि इसे कैसे किया जाना चाहिए या इसे कैसा होना चाहिए।

इस प्रकार समान विचारधारा और व्यवसाय के लोग जब जुड़ते हैं तो विचारों के आदान-प्रदान से बंधन मज़बूत होता है। नये रिश्ते बनते हैं और अपने व्यवसाय के प्रति जुड़ाव गहरा होता है। सोशल मीडिया इसके लिए सबसे अच्छा माध्यम है। इससे व्यवसाय में मदद, सलाह, सूचना, शिक्षण में मदद करने वाले नये उत्पादों तथा विषय विशेषज्ञों की विशेषज्ञता का सीधा लाभ आसानी से मिल जाता है। इस तरह सोशल मीडिया एक उपलब्धि भी है।

अब हम देखें कि किस तरह सोशल मीडिया के ये विभिन्न उपकरण शिक्षक की व्यावसायिक प्रगति में योगदान दे सकते हैं।

- **ट्विटर** — इसका सबसे बेहतर उपयोग प्रश्न करके किया जा सकता है। एक प्रश्न में आप अनेक उत्तर पा सकते हैं। शिक्षा के बारे में बात कर सकते हैं। इस पर सक्रिय रहकर एक शिक्षक स्वयं बहस के अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय तथा स्थानीय मुद्दों तक पर अपनी राय रख सकता है और दूसरों के विचार जान सकता है।

- #educhat#kinderchat#niedchatie#eytaliking — इसमें शिक्षक की सहायता करने वाले कुछ अति प्रचलित अवयव है।
- फेसबुक — फेसबुक पर अपनी सक्रियता को एक शिक्षक दूसरे शिक्षकों के साथ एक समूह तैयार कर रचनात्मक अधिगम/खेल आधारित अधिगम जैसे नवाचारों को अपनाने के बारे में अपनी राय रख सकते हैं। राय ले सकते हैं। अपने द्वारा किये गये नवाचारों को प्रदर्शित कर सकते हैं और उस पर सुझाव प्राप्त कर सकते हैं और दे सकते हैं।
- वाट्स-एप — हममें से लगभग प्रत्येक आज वाट्स-एप पर सक्रिय हैं। अकेला भी और किसी न किसी समूह में भी। ये अबतक का सबसे सशक्त सोशल मीडिया उपकरण है। शिक्षकों को भी इस पर अपना ग्रुप बनाना चाहिए। बस उसका उद्देश्य व्यावसायिक प्रगति यानि अपने विषय से संबंधित जानकारी में प्रगति करना होना चाहिए। यही इस माध्यम की सकारात्मकता है कि इससे तुरंत आपको लाभ मिल जाते हैं। शिक्षकों को भी इस माध्यम का उपयोग बुद्धिमतापूर्ण रूप से कर अपनी व्यावसायिक प्रगति को आधार देना चाहिए।
- इस माध्यम के वॉयस-कॉल और वीडियो-कॉल जैसे फीचर शिक्षक को अपने काम को वास्तविक समय में दूसरों तक पहुँचाने में मददगार हो सकते हैं। किसी भी विषय पर सामूहिक विचार-विमर्श में शामिल हो सकते हैं। सबसे अच्छी बात यह है कि इसमें कागज़ी कार्यवाही से छुटकारा मिल जाता है क्योंकि सब कुछ अपने-आप सेव होता जाता है और उसके खो जाने का खतरा भी नहीं रहता। इस पर

एक विषय पर उतने शिक्षक विचार कर सकते हैं जितने एक क्लास में छात्र होते हैं।

- ऑनलाइन नेटवर्किंग शिक्षकों को अपना एक स्वयं का नेटवर्क विकसित करना चाहिए। यह आमने-सामने, एक-दूसरे से मिलने, विचारों के आदान-प्रदान, सभी क्षेत्रों के सभी लोगों से बातचीत करने, अपने शोधपत्रों को सबके साथ साझा करने, स्वयं की वेबसाइट विकसित करके सभी तक पहुँचाने इत्यादि में मदद करती है। इस सबसे आप अपने काम के बारे में लोगों को यह बता सकते हैं कि आप शिक्षण और उसकी प्रक्रिया के बारे में क्या विचार रखते हैं और इस पर उनके विचार और सुझाव भी जान सकते हैं।

शिक्षण का अंतर्राष्ट्रीय आयाम — इंटरनेट और सोशल मीडिया की भूमिका

शिक्षण अब एक अंतर्राष्ट्रीय मुद्दा बन गया है। शिक्षक अब बाहर और अपने देश के अलावा दूसरे देशों की शिक्षा और शिक्षा पद्धति पर ध्यान देने लगे हैं, ताकि वहाँ हो रहे नवाचारों को अपनाकर अपनी व्यवसायिक प्रगति को दृढ़ कर सकें। भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न विषयों के शिक्षण में अनेक नवाचार किये जाते रहे हैं और किये जा रहे हैं।

जापान में शिक्षकों के आपसी सहयोग से किया जाने वाला शिक्षण बहुत प्रचलित शिक्षण पद्धति है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उत्सुकता जगाती रही है।

इस पद्धति में शिक्षकों के आपसी सहयोग से एक पाठ तैयार किया जाता है। उनके शिक्षण का अवलोकन और फिर विश्लेषण किया जाता है। शिक्षक एक-दूसरे से सीखते हैं। अपने विचार साझा करते हैं तथा उन्हें अपने शिक्षण में स्थान देते हैं।

यह शिक्षकों के लिए एक खुला मंच होता है जहाँ वह विचार-विमर्श करते हैं। व्यावसायिक प्रगति में आपसी सहयोग का यह जापानी उदाहरण हम भी अपना सकते हैं और यह सब आभासी धरातल पर इंटरनेट और सोशल मीडिया की मदद से भी किया जा सकता है।

उपसंहार

शिक्षा एक अनवरत् चलने वाली प्रक्रिया है और शिक्षक इसका चालक है। चालक का निष्पात होना इस प्रक्रिया में बहुत सहायक होता है। शिक्षक को इस बारे में स्वयं प्रयास करने होंगे, उसे नीति निर्धारकों,

प्रशासकों और प्रबंधन की ओर न देखकर स्वयं इस दिशा में आगे कदम बढ़ाना होगा। सूचना तकनीक के इस युग में तो यह और भी आसान हो गया है और वह बगैर अपने कार्यस्थल, अपने आस-पास, अपने घर से दूर जाए निरंतर सक्रिय रह सकता है। यह दुनिया उसकी अँगुलियों पर सिमट आयी है। बस उसे एक क्लिक भर करना है एक पूरी दुनिया उसके लिए उपलब्ध हो जाती है और वह केवल एक शिक्षक ही नहीं रह जाता, बल्कि शिक्षा का नियामक भी बन सकता है। आवश्यकता बस इस नये माध्यम के सकारात्मक पक्षों को अपनाने की है।

उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान सीखने के प्रतिफल (कक्षा 6 से 8)

परिचय

विज्ञान गत्यात्मक और निरंतर परिवर्धित ज्ञान का भंडार है जिसमें अनुभव के नए-नए क्षेत्रों को शामिल किया जाता है। मानव का यह प्रयास रहा है कि विश्व को समझने के लिए अवलोकनों के आधार पर अवधारणाओं के नए मॉडल स्थापित किए जाएँ, ताकि नियमों तथा सिद्धांतों तक पहुँचा जा सके। एक प्रगतिशील समाज में विज्ञान, मनुष्य को गरीबी के कुचक्र से बाहर निकालने, अनभिज्ञता तथा अंधविश्वास से दूर करने में मुक्तिदाता की भूमिका निभा सकता है। आज मानव का सामना तेज़ी से बदलते हुए विश्व से हो रहा है, जहाँ लचीलापन, नवाचार तथा सृजनात्मकता महत्वपूर्ण कौशल हैं। अतः विज्ञान-शिक्षा के स्वरूप को निर्धारित करते समय इन महत्वपूर्ण कौशलों का ध्यान रखा जाना चाहिए। अच्छी विज्ञान-शिक्षा वह है जो विद्यार्थी के प्रति, जीवन के प्रति और विज्ञान के प्रति खरी हो।

उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान को संज्ञानात्मक विकास के स्तरों के अनुरूप एक प्रमुख विषय के रूप

में पाठ्यचर्या में शामिल किया जाना चाहिए। इस स्तर पर इसका प्राथमिक स्तर पर पढ़ाए जा रहे पर्यावरण अध्ययन से विज्ञान के तत्वों की ओर क्रमिक परिवर्तन हो जाता है। यह आवश्यक है कि बच्चे के ज्ञान का विकास हो और यह उसके आस-पास की वस्तुओं से प्राप्त अनुभवों से शुरू किया जाए। बच्चे को सरल तकनीकी इकाइयों और मॉडलों को डिज़ाइन करने के लिए हाथ से काम करके और जनन तथा यौन स्वास्थ्य के बारे में अधिकाधिक सीखते रहने के लिए परिचित अनुभवों द्वारा विज्ञान के सिद्धांतों को समझने में शामिल करना चाहिए। वैज्ञानिक अवधारणाओं को मुख्यतः गतिविधियों, प्रयोगों एवं सर्वेक्षणों के द्वारा समझा जाना चाहिए। विद्यालय और आस-पास की जाने वाली समूह गतिविधियाँ, बच्चों के बीच आपसी चर्चाएँ, शिक्षक व बच्चों के बीच चर्चाएँ, सर्वेक्षण, आँकड़ों के व्यवस्थापन तथा प्रदर्शनियों के माध्यम से प्रदर्शन, सीखने-सिखाने के महत्वपूर्ण घटक होने चाहिए।

पाठ्यचर्या संबंधी अपेक्षाएँ

उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यचर्या का उद्देश्य निम्नलिखित का विकास करना है —

- वैज्ञानिक प्रकृति एवं वैज्ञानिक सोच।
- वैज्ञानिक ज्ञान की प्रकृति की समझ, जैसे — जाँचने योग्य, एकीकृत, अपर्याप्त, नीति-निरपेक्ष, विकासात्मक एवं रचनात्मक प्रकृति।
- विज्ञान के प्रक्रिया कौशल जिसके अंतर्गत अवलोकन करना, प्रश्न उठाना, सीखने के विभिन्न संसाधनों की खोज, खोज/अन्वेषण की योजना बनाना, परिकल्पना का निर्माण एवं उनकी जाँच, आँकड़ों का संग्रहण, विश्लेषण एवं व्याख्या हेतु विभिन्न उपकरणों का उपयोग करना, व्याख्या में प्रमाणों द्वारा समर्थन देना, वैकल्पिक व्याख्याओं पर विचार करने और उनके मूल्यांकन हेतु समीक्षात्मक चिंतन करना, स्वयं के विचारों पर मनन करना आदि शामिल हैं।
- विज्ञान के उद्भव के ऐतिहासिक पक्ष की समझ।
- पर्यावरणीय सरोकारों के प्रति संवेदनशीलता।
- मानव गरिमा एवं मानव अधिकारों, लैंगिक समता, ईमानदारी, एकता, सहयोग के मूल्यों एवं जीवन के सरोकारों के प्रति आदर।

पाठ्यक्रम निम्नलिखित विषयों/प्रसंगों (थीम) पर आधारित है, जो अंतरविषयक प्रकृति के हैं —

- भोजन
- पदार्थ
- सजीवों का संसार (जीव जगत)
- गतिशील वस्तुएँ, व्यक्ति एवं विचार
- वस्तुएँ कैसे कार्य करती हैं
- प्राकृतिक घटनाएँ
- प्राकृतिक संसाधन

कक्षा 6 (विज्ञान)

सीखने-सिखाने की प्रस्तावित प्रक्रियाएँ	सीखने के प्रतिफल (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों को जोड़ों में/समूहों में/व्यक्तिगत रूप से समावेशी व्यवस्था का अवसर प्रदान करते हुए निम्नलिखित के लिए प्रोत्साहित किया जाए—</p> <ul style="list-style-type: none"> संवेदी अंगों के प्रयोग, जैसे— देखना, स्पर्श करना, चखना, सूँघना, सुनना, आदि द्वारा चारों ओर के परिवेश, प्राकृतिक प्रक्रियाओं तथा परिघटनाओं की खोजबीन करना। प्रश्न उठाना और उत्तरों की खोज करना—मनन, परिचर्चा, उपयुक्त गतिविधियों के डिजाइन तथा क्रियान्वयन, भूमिका निर्वाह (रोल प्ले), वाद-विवाद, आई.सी.टी. के उपयोग इत्यादि के माध्यम से। गतिविधि, प्रयोग, सर्वेक्षण, क्षेत्र भ्रमण, आदि के दौरान किए गए अवलोकनों का रिकॉर्ड रखना। अभिलेखित आँकड़ों का विश्लेषण, परिणामों की व्याख्या एवं निष्कर्ष निकालना/सामान्यीकरण करना एवं निष्कर्षों को साथियों तथा वयस्कों के साथ साझा करना। नवीन विचारों, नवीन डिजाइनों, पैटर्नों, कार्य साधन आदि द्वारा रचनात्मकता प्रदर्शित करना। सहयोग, सहभागिता, ईमानदारीपूर्ण रिपोर्ट करना, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, जैसे— मूल्यों को आत्मसात तथा अर्जित करना एवं महत्व समझना। 	<p>बच्चे—</p> <ul style="list-style-type: none"> पदार्थों और जीवों, जैसे— वनस्पति रेशे, पुष्प, आदि को अवलोकन योग्य विशेषताओं, जैसे— बाह्य आकृति, बनावट, कार्य, गंध आदि के आधार पर पहचान करते हैं। पदार्थों और जीवों में गुणों, संरचना एवं कार्यों के आधार पर भेद करते हैं, जैसे— तंतु (रेशे) एवं धागे में, मूसला एवं रेशेदार जड़ में, विद्युत-चालक एवं विद्युत-रोधक में आदि। पदार्थों, जीवों और प्रक्रियाओं को अवलोकन योग्य गुणों के आधार पर वर्गीकृत करते हैं, जैसे— पदार्थों को विलेय, अविलेय, पारदर्शी, पारभासी एवं अपारदर्शी के रूप में; परिवर्तनों को, उत्क्रमणीय हो सकते हैं एवं उत्क्रमणीय नहीं हो सकते, के रूप में; पौधों को शाक, झाड़ी, वृक्ष, विसर्पी लता, आरोही के रूप में; आवास के घटकों को जैव एवं अजैव घटकों के रूप में; गति को सरल रेखीय, वर्तुल एवं आवर्ती के रूप में आदि। प्रश्नों के उत्तर ज्ञात करने के लिये सरल छानबीन करते हैं, जैसे— पशु चारे में पोषक तत्व कौन-से हैं? क्या समस्त भौतिक परिवर्तन उत्क्रमणीय किए जा सकते हैं? क्या स्वतंत्रतापूर्वक लटका हुआ चुंबक किसी विशेष दिशा में अवस्थित हो जाता है? प्रक्रियाओं और परिघटनाओं को कारणों से संबंधित करते हैं, जैसे— भोजन और अभावजन्य रोग; वनस्पति एवं जंतुओं का आवास के साथ अनुकूलन; प्रदूषकों के कारण वायु की गुणवत्ता आदि।

- प्रक्रियाओं और परिघटनाओं की व्याख्या करते हैं, जैसे — पादप रेशों का प्रसंस्करण, पौधों एवं जंतुओं में गति, छाया का बनना, समतल दर्पण से प्रकाश का परावर्तन, वायु के संघटन में विभिन्नता, वर्मीकंपोस्ट (कृमिकंपोस्ट) का निर्माण आदि। भौतिक राशियों, जैसे — लंबाई का मापन करते हैं तथा मापन को एस.आई. मात्रक (अंतर्राष्ट्रीय मात्रक-प्रणाली) में व्यक्त करते हैं।
- जीवों और प्रक्रियाओं के नामांकित चित्र/फ़्लो चार्ट बनाते हैं, जैसे — पुष्प के भाग, संधियाँ, निस्संदन (फ़िल्टर करना), जल चक्र आदि।
- अपने परिवेश की सामग्रियों का उपयोग कर मॉडलों का निर्माण करते हैं और उनकी कार्यविधि की व्याख्या करते हैं, जैसे — पिनहोल कैमरा, पेरिस्कोप, विद्युत टॉर्च आदि।
- वैज्ञानिक अवधारणाओं की समझ को दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं, जैसे — संतुलित भोजन हेतु भोज्य पदार्थों का चयन करना, पदार्थों को अलग करना, मौसम के अनुकूल कपड़ों का चयन करना, दिक्सूची के प्रयोग द्वारा दिशा का ज्ञान करना, भारी वर्षा/अकाल की परिस्थितियों से निपटने की प्रक्रिया में सुझाव देना आदि।
- पर्यावरण की सुरक्षा हेतु प्रयास करते हैं, जैसे — भोजन, जल, विद्युत के अपव्यय और कचरे के उत्पादन को न्यूनतम करना; वर्षा जल संग्रहण; पौधों की देखभाल अपनाने हेतु जागरूकता फैलाना आदि।
- डिज़ाइन बनाने, योजना बनाने एवं उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करने में रचनात्मकता का प्रदर्शन करते हैं।
- ईमानदारी, वस्तुनिष्ठता, सहयोग, भय एवं पूर्वाग्रहों से मुक्ति, जैसे मूल्यों को प्रदर्शित करते हैं।

कक्षा 7 (विज्ञान)

सीखने-सिखाने की प्रस्तावित प्रक्रियाएँ	सीखने के प्रतिफल (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों को जोड़ों में/समूहों में/व्यक्तिगत रूप से समावेशी व्यवस्था का अवसर प्रदान करते हुए निम्नलिखित के लिए प्रोत्साहित किया जाए —</p> <ul style="list-style-type: none"> संवेदी अंगों के प्रयोग, जैसे — देखना, स्पर्श करना, चखना, सूँघना, सुनना, आदि द्वारा चारों ओर के परिवेश, प्राकृतिक प्रक्रियाओं तथा परिघटनाओं की खोजबीन करना। मनन, परिचर्चा, उपयुक्त गतिविधियों के डिजाइन तथा क्रियान्वयन, भूमिका निर्वाह (रोल प्ले), वाद-विवाद, आई.सी.टी. के उपयोग इत्यादि के माध्यम से प्रश्न उठाना और उत्तरों की खोज करना। गतिविधि, प्रयोग, सर्वेक्षण, क्षेत्र भ्रमण, आदि के दौरान किए गए अवलोकनों का रिकॉर्ड रखना। अभिलेखित आँकड़ों का विश्लेषण, परिणामों की व्याख्या एवं निष्कर्ष निकालना/सामान्यीकरण करना एवं निष्कर्षों को साथियों तथा वयस्कों के साथ साझा करना। नवीन विचारों, नवीन डिजाइनों, पैटर्नों, कार्य साधन, आदि द्वारा रचनात्मकता प्रदर्शित करना। सहयोग, सहभागिता, ईमानदारीपूर्ण रिपोर्ट करना, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, जैसे — मूल्यों को आत्मसात् तथा अर्जित करना एवं महत्व समझना। 	<p>बच्चे —</p> <ul style="list-style-type: none"> पदार्थों और जीवों, जैसे — जंतु रेशे, दाँतों के प्रकार, दर्पण और लेंस, आदि को अवलोकन योग्य विशेषताओं, जैसे — छवि/आकृति, बनावट, कार्य आदि के आधार पर पहचान करते हैं। पदार्थों और जीवों में गुणों, संरचना एवं कार्यों के आधार पर भेद करते हैं, जैसे — विभिन्न जीवों में पाचन, एकलिंगी व द्विलिंगी पुष्प, ऊष्मा के चालक व कुचालक, अम्लीय, क्षारकीय व उदासीन पदार्थ, दर्पणों व लेंसों से बनने वाले प्रतिबिंब आदि। पदार्थों, जीवों और प्रक्रियाओं को अवलोकन योग्य गुणों के आधार पर वर्गीकृत करते हैं, जैसे — पादप व जंतु रेशे तथा भौतिक व रासायनिक परिवर्तन। प्रश्नों के उत्तर ज्ञात करने के लिये सरल छानबीन करते हैं, जैसे — क्या फूलों (रंगीन फूलों) के निकर्ष का उपयोग अम्लीय-क्षारीय सूचकों के रूप में किया जा सकता है? क्या हरे रंग से भिन्न रंग वाले पत्तों में भी प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया होती है? क्या सफ़ेद रंग का प्रकाश बहुत से रंगों से मिलकर बनता है? आदि। प्रक्रियाओं और परिघटनाओं को कारणों से संबंधित करते हैं, जैसे — हवा की गति का वायु दाब से, मिट्टी के प्रकार का फ़सल उत्पादन से, मानव गतिविधियों से जल स्तर के कम होने से, आदि। प्रक्रियाओं और परिघटनाओं की व्याख्या करते हैं, जैसे — जंतु रेशों का प्रसंस्करण, ऊष्मा संवहन के तरीके, मानव व पादपों के विभिन्न अंग व तंत्र, विद्युत धारा के ऊष्मीय व चुंबकीय प्रभाव, आदि।

- रासायनिक अभिक्रियाओं, जैसे — अम्ल-क्षारक अभिक्रिया, संक्षारण, प्रकाश संश्लेषण, श्वसन, आदि के शब्द-समीकरण लिखते हैं। ताप, स्पंद दर, गतिमान पदार्थों की चाल, सरल लोलक की समय गति, आदि के मापन एवं गणना करते हैं।
- नामांकित चित्र/फ़्लो चार्ट बनाते हैं, जैसे — मानव व पादप अंग-तंत्र, विद्युत परिपथ, प्रयोगशाला-व्यवस्थाएँ, रेशम के कीड़े के जीवन-चक्र आदि।
- ग्राफ़ बनाते हैं और उसकी व्याख्या करते हैं, जैसे — दूरी-समय का ग्राफ़।
- अपने परिवेश की सामग्री का उपयोग कर मॉडलों का निर्माण करते हैं और उनकी कार्यविधि की व्याख्या करते हैं, जैसे — स्टेथोस्कोप, एनीमोमीटर, इलेक्ट्रोमैग्नेट, न्यूटन की कलर डिस्क आदि।
- वैज्ञानिक अन्वेषणों की कहानियों पर परिचर्चा करते हैं और उनका महत्व समझते हैं।
- वैज्ञानिक अवधारणाओं की समझ को दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं, जैसे — अम्लीयता से निपटना, मिट्टी की जाँच एवं उसका उपचार, संक्षारण को रोकने के विभिन्न उपाय, कायिक प्रवर्धन के द्वारा कृषि, दो अथवा दो से अधिक विद्युत सेलों का विभिन्न विद्युत उपकरणों में संयोजन, विभिन्न आपदाओं के दौरान व उनके बाद उनसे निपटना, प्रदूषित पानी के पुनः उपयोग हेतु उपचारित करने की विधियाँ सुझाना आदि।
- पर्यावरण की सुरक्षा हेतु प्रयास करते हैं, जैसे — सार्वजनिक स्थानों पर स्वच्छता प्रबंधन हेतु अच्छी आदतों का अनुसरण, प्रदूषकों के उत्पादन को न्यूनतम करना, मिट्टी के क्षरण को रोकने के लिए अधिकाधिक वृक्ष लगाना, प्राकृतिक संसाधनों के

अत्यधिक उपयोग करने के परिणामों के प्रति लोगों को संवेदनशील बनाना आदि।

- डिज़ाइन बनाने, योजना बनाने एवं उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करने में रचनात्मकता का प्रदर्शन करते हैं।
- ईमानदारी, वस्तुनिष्ठता, सहयोग, भय एवं पूर्वाग्रहों से मुक्ति जैसे मूल्यों को प्रदर्शित करते हैं।

कक्षा 8 (विज्ञान)

सीखने-सिखाने की प्रस्तावित प्रक्रियाएँ	सीखने के प्रतिफल (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों को जोड़ों में/समूहों में/व्यक्तिगत रूप से समावेशी व्यवस्था का अवसर प्रदान करते हुए निम्नलिखित के लिए प्रोत्साहित किया जाए—</p> <ul style="list-style-type: none"> संवेदी अंगों के प्रयोग, जैसे— देखना, स्पर्श करना, चखना, सूँघना, सुनना, आदि द्वारा चारों ओर के परिवेश, प्राकृतिक प्रक्रियाओं तथा परिघटनाओं की खोजबीन करना। मनन, परिचर्चा, उपयुक्त गतिविधियों के डिजाइन तथा क्रियान्वयन, भूमिका निर्वाह (रोल प्ले), वाद-विवाद, आई.सी.टी. के उपयोग इत्यादि के माध्यम से प्रश्न उठाना और उत्तरों की खोज करना। गतिविधि, प्रयोग, सर्वेक्षण, क्षेत्र भ्रमण, आदि के दौरान किए गए अवलोकनों का रिकॉर्ड रखना। अभिलेखित आँकड़ों का विश्लेषण, परिणामों की व्याख्या एवं निष्कर्ष निकालना/सामान्यीकरण करना एवं निष्कर्षों को साथियों तथा वयस्कों के साथ साझा करना। नवीन विचारों, नवीन डिजाइनों, पैटर्नों, कार्य साधन, आदि द्वारा रचनात्मकता प्रदर्शित करना। सहयोग, सहभागिता, ईमानदारीपूर्ण रिपोर्ट करना, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, जैसे— मूल्यों को आत्मसात तथा अर्जित करना एवं महत्व समझना। 	<p>बच्चे—</p> <ul style="list-style-type: none"> पदार्थों और जीवों में गुणों, संरचना एवं कार्यों के आधार पर भेद करते हैं, जैसे— प्राकृतिक एवं मानव निर्मित रेशों, संपर्क और असंपर्क बलों, विद्युत चालक और विद्युत रोधक के रूप में द्रव पदार्थों, पौधों और जंतुओं की कोशिकाओं, पिंडज और अंडज जंतुओं में आदि। पदार्थों, जीवों और प्रक्रियाओं को अवलोकन योग्य गुणों के आधार पर वर्गीकृत करते हैं, जैसे— धातुओं और अधातुओं, खरीफ़ और रबी फसलों, उपयोगी और हानिकारक सूक्ष्मजीवों, लैंगिक और अलैंगिक प्रजनन, खगोलीय पिंडों, समाप्त होने वाले एवं अक्षय प्राकृतिक संसाधन आदि। प्रश्नों के उत्तर ज्ञात करने के लिये सरल छानबीन करते हैं, जैसे— दहन के लिए आवश्यक शर्तें क्या हैं? हम अचार और मुरब्बों में नमक और चीनी क्यों मिलाते हैं? क्या द्रव समान गहराई पर समान दाब डालते हैं? प्रक्रियाओं और परिघटनाओं को कारणों से संबंधित करते हैं, जैसे— हवा में प्रदूषकों की उपस्थिति के कारण धूम-कोहरे का बनना; अम्ल वर्षा के कारण स्मारकों का क्षरण आदि। प्रक्रियाओं और परिघटनाओं की व्याख्या करते हैं, जैसे— मनुष्य और जंतुओं में प्रजनन; ध्वनि का उत्पन्न होना तथा संचरण; विद्युत धारा के रासायनिक प्रभाव; बहुप्रतिबिंबों का बनना, ज्वाला की संरचना आदि।

- रासायनिक अभिक्रियाओं, जैसे — धातुओं और अधातुओं की वायु, जल तथा अम्लों के साथ अभिक्रियाओं के लिए शब्द-समीकरण लिखते हैं।
- आपतन और परावर्तन कोणों आदि का मापन करते हैं।
- सूक्ष्मजीवों, प्याज़ की झिल्ली, मानव गाल की कोशिकाओं, आदि के स्लाइड तैयार करते हैं और उनसे संबंधित सूक्ष्म लक्षणों का वर्णन करते हैं।
- नामांकित चित्र/फ़्लो चार्ट बनाते हैं, जैसे — कोशिका की संरचना, आँख, मानव जनन, अंगों एवं प्रयोग संबंधी व्यवस्थाओं आदि।
- अपने परिवेश की सामग्रियों का उपयोग कर मॉडलों का निर्माण करते हैं और उनकी कार्यविधि की व्याख्या करते हैं, जैसे — इकतारा, इलेक्ट्रोस्कोप, अग्नि शामक यंत्र आदि।
- वैज्ञानिक अवधारणाओं को समझकर दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं, जैसे — अम्लीयता से निपटना, मिट्टी की जाँच एवं उसका उपचार, संक्षारण को रोकने के विभिन्न उपाय, कायिक प्रवर्धन के द्वारा कृषि, दो अथवा दो से अधिक विद्युत सेलों का विभिन्न विद्युत उपकरणों में संयोजन, विभिन्न आपदाओं के दौरान व उनके बाद उनसे निपटना, प्रदूषित पानी के पुनः उपयोग हेतु उपचारित करने की विधियाँ सुझाना आदि।
- वैज्ञानिक अन्वेषणों की कहानियों पर परिचर्चा करते हैं और उनका महत्व समझते हैं।
- पर्यावरण की सुरक्षा हेतु प्रयास करते हैं, जैसे — संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करके; उर्वरकों और कीटनाशकों का नियंत्रित उपयोग करके; पर्यावरणीय खतरों से निपटने के सुझाव देकर आदि।

- डिज़ाइन बनाने, योजना बनाने एवं उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करने में रचनात्मकता का प्रदर्शन करते हैं।
- ईमानदारी, वस्तुनिष्ठता, सहयोग, भय एवं पूर्वाग्रहों से मुक्ति जैसे मूल्यों को प्रदर्शित करते हैं।

विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए

(पर्यावरण अध्ययन एवं विज्ञान)

कुछ विद्यार्थियों को पर्यावरण अध्ययन तथा विज्ञान सीखते समय कक्षा के भीतर तथा बाहर आयोजित प्रयोगों और हाथ से करने वाले क्रियाकलापों में गतिशीलता तथा कार्यसाधित कौशलों के लिए सहयोग की आवश्यकता हो सकती है। ऐसे विद्यार्थी अपने पाठ के अध्ययन में अनुकूलित या वैकल्पिक गतिविधियाँ, अनुकूलित उपकरण, अतिरिक्त समय सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के उपयोग के अवसर, किसी व्यस्क या साथी के सहयोग आदि उपलब्ध कराए जाने से लाभान्वित होते हैं, जो उन्हें बाधिता के कारण मिल नहीं पाते हैं।

अतः कुछ विशेष स्थितियों में निम्नलिखित अतिरिक्त देखभाल अपेक्षित है —

दृष्टिबाधित बच्चों के लिए

- अमूर्त तथा कठिन अवधारणाएँ
- प्रयोग, जिनमें विशेष रूप से शारीरिक सुरक्षा शामिल है
- अधिक समय की आवश्यकता
- बोर्ड पर चॉक से लिखना, प्रयोग प्रदर्शन, ग्राफ़ और चित्रों द्वारा प्रस्तुतीकरण आदि जैसी देखकर समझी जाने वाली जानकारी।

श्रवणबाधित बच्चों के लिए

- अमूर्त शब्दों की समझ तथा अमूर्त अवधारणाओं, ज्ञान, विचारों के मध्य जुड़ाव (विज्ञान की कुछ अवधारणाओं जैसे — प्रकाश-संश्लेषण, आवास, सूक्ष्मजीव आदि जिन्हें विद्यार्थी बिना दृश्य प्रस्तुतीकरणों के नहीं समझ सकते हैं।)
- प्रयोगों का संचालन
- ऐसे प्रश्नों को हल करने में, जहाँ एक आयाम की जगह एक से अधिक आयामों, जैसे — संख्या, आकार, आकृति, रंग आदि के आधार पर वस्तुओं की तुलना की जाए।

संज्ञानात्मक रूप से बाधित तथा बौद्धिक असमर्थता वाले बच्चों के लिए

- विज्ञान की तकनीकी भाषा को समझना
- विभिन्न अवधारणाओं के मध्य अर्थपूर्ण कड़ियों/संबंधों को स्थापित करना (जैसे — दाब तथा बल के मध्य)
- योजना बनाना, सुव्यवस्थित करना, क्रमीकरण तथा सामान्यीकरण
- अमूर्त अवधारणाओं को समझना
- विज्ञान के प्रयोगों का प्रबंध तथा संचालन करना।

मेरी मम्मी

PAGE _____
DATE ____/____/____



मेरी मम्मी बहुत अच्छी हैं। मेरी मम्मी सब काम करती हैं। मेरी मम्मी बहुत सुन्दर हैं। मेरी मम्मी मुझे बहुत अच्छा टिफिन बनाकर देती हैं। मेरी मम्मी मेरे लीखे अच्छे कपड़े लाती हैं। मेरी मम्मी बड़े स्कूल छोड़कर आती हैं। जब मैं स्कूल जाती हूँ तो मेरी मम्मी मेरे बाल बान्ती हैं। मैं अपनी मम्मी का कबला मारती हूँ। और मैं अपनी मम्मी के साथ प्यार के कामों में मदद करती हूँ।

नाम - अरिहा सान

स्कूल - श्री राम स्कूल

कक्षा - 6

मवाना U.P

विज्ञान की शिक्षा

सुनील कुमार गौड़*

होता है उद्देश्य विज्ञान का
करना समस्या का समाधान,
करके वैज्ञानिक प्रयत्न
करना सृजन नवीन ज्ञान।
अपनाकर 'प्रक्रिया' विज्ञान की
रचें विज्ञान के 'उत्पाद',
समझकर क्षमता स्वयं की
करें दूर अंधविश्वास।
अपनाकर विधियाँ विज्ञान की
करके वैज्ञानिक क्रियाकलाप,
बनें वैज्ञानिक आप
बनाएँ समाज को उन्नत।
अपनाकर पद्धति विज्ञान की
करके नई-नई बातें मालूम,
स्वयं समझें आप
करें वैज्ञानिक प्रयास।
संविधान का है यही कहना
वैज्ञानिक दृष्टिकोण हो सबका अपना,
करें सृजन रमन, बोस, कलाम की तरह,
करके खोज सत्य की।
करें भारत को महान,
बनाएँ भारत को महान ॥

* शिक्षक-प्रशिक्षक, पाठ्यचर्या विभाग, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, उत्तराखण्ड, देहरादून-248008

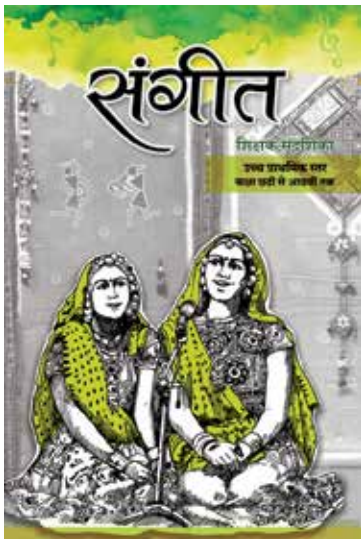
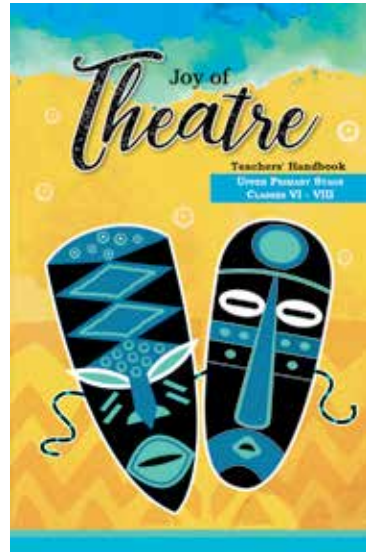
एन.सी.ई.आर.टी. के कुछ अन्य प्रकाशन

Joy of Theatre

₹ 210.00/pp.181

Code — 13171

ISBN — 978-93-5292-017-4



संगीत

₹ 180.00/pp.148

Code — 13173

ISBN — 978-93-5292-020-4

अधिक जानकारी के लिए कृपया www.ncert.nic.in देखिए अथवा कॉपीराइट पृष्ठ पर दिए गए पत्तों पर व्यापार प्रबंधक से संपर्क करें।

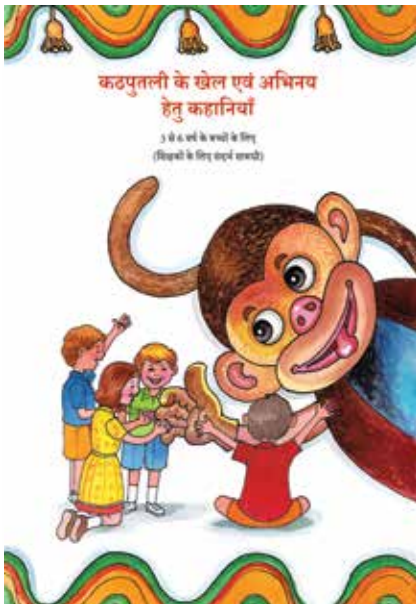
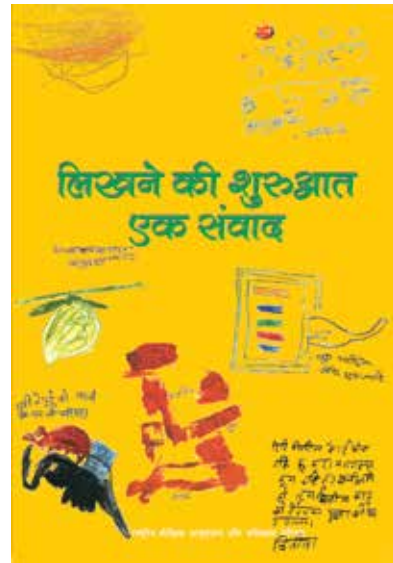
एन.सी.ई.आर.टी. के कुछ अन्य प्रकाशन

लिखने की शुरुआत एक संवाद

₹ 165.00 / पृष्ठ 132

कोड — 32107

ISBN—978-93-5007-268-4



कठपुतली के खेल एवं अभिनय हेतु कहानियाँ

₹ 50.00 / पृष्ठ 34

कोड — 13161

ISBN—978-93-5007-859-4

लेखकों के लिए दिशा निर्देश

- लेख सरल भाषा में तथा रोचक होना चाहिए।
- लेख की विषय-वस्तु 2500 से 3000 या अधिक शब्दों में डबल स्पेस में टंकित होना वांछनीय है।
- चित्र कम से कम 300 dpi में होने चाहिए।
- तालिका, ग्राफ़ विषय-वस्तु के साथ होने चाहिए।
- चित्र अलग से भेजे जाएँ तथा विषय-वस्तु में उनका स्थान स्पष्ट रूप से अंकित किया जाना चाहिए।
- शोध-पत्रों के साथ कम से कम सारांश भी दिया जाए।
- लेखक लेख के साथ अपना संक्षिप्त विवरण तथा अपनी शैक्षिक विशेषज्ञता अवश्य भेजें।
- शोधपरक लेखों के साथ संदर्भ की सूची भी अवश्य दें।
- संदर्भ का प्रारूप एन.सी.ई.आर.टी. हाउस स्टाइल के अनुसार निम्नवत होना चाहिए—
सेन गुप्त, मंजीत. 2013. प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा. पी.एच.आई. लर्निंग प्रा. लि., दिल्ली.

लेखक अपने मौलिक लेख या शोध-पत्र सॉफ़्ट कॉपी (यूनीकोड में) के साथ निम्न पते पर या ई-मेल पर भेजे —

अकादमिक संपादक

प्राथमिक शिक्षक

प्रारंभिक शिक्षा विभाग

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016

ई-मेल – prathamik.shikshak@gmail.com



विद्यया ऽ मृतमश्नुते



एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING